श्री मुख वाणी प्रसाद

लेखक एवं प्रकाशक
महात्मा सुशांत निजानंदी
धर्मप्रचारक
निजांनद सम्प्रदाय

प्राप्ति स्थान

श्री निजानंद आश्रम वडोदरा
ने.हा. 8, बायबास, एल. एण्ड टी. के पास,
सयाजीपुरा, वडोदरा–390019

श्री निजानंद आश्रम रतनपुरी
गांव व पोस्ट–रतनपुरी व्हाया खतौली,
जिला–मुजफ्फरनगर, उ. प्र.

Shri Nijanand Foundation,
Lord Prannath Divine centre
(L.P.D.C.), Macon, U.S.A.

श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ सरसावा,
नकुड़ रोड, सरसावा
जिला सहारनपुर, उ. प्र.

श्री प्राणनाथ जी मंदिर, वडोदरा
भावदास मोहल्ला, शियाबाग,
खण्डेराव मार्केट के पीछे, वडोदरा

श्री जी साहेब जू सेवाश्रम
ग्राम और पोस्ट – जरमाड़ा,
ता.– कपड़वंज, जि. खेड़ा, गुजरात

श्री प्राणनाथ जी मंदिर, शामलाजी,
मेश्वो डेम रोड, साबर कांठा

श्री निजानंद सत्संग भवन, माटीपुल
गांव–माटीपुल, पोस्ट–बोकाजान,
कार्बी आंगलांग, असम

श्री निजानंद आश्रम, सढौली
जिला–सहारनपुर, उत्तराखण्ड

सर्व हक सर्वाधीन

मुद्रक :–

एक निवेदन

अपने निज आत्म स्वरूप का बोध, निज सुखों की याद, एवं परब्रह्म धनी के सानिध्य का अहसास इसी जीवन में कर लेना ही जागनी का फल है। इसे चरितार्थ करने के लिये हमारे धनी ने मेहर करके हमारे यहां के दिलों को अपना अर्श धाम बनाने का वादा किया।

मेहेर दिल अर्श किया, दिल मोमिन मेहेर सागर।

हमारा दिल धनी के बैठने योग्य ठिकाना बन पाये और जागनी लीला के सर्वश्रेष्ठ सुख मिल पाये इसलिये धनी ने अपनी पंच न्यामतें बख्शीश के रूप में अवतरित की हैं। अतः इन पांचों शक्तियों की श्रीमुख वाणी प्रमाणित व्याख्या एवं गुण लक्षण एवं कार्य प्रणाली को समझ लेना परम आवश्यक बन जाता है कि ये हमारी रूह को जगाने में, हमारे दिल को अर्श बनाने में किस तरह से सहायभूत हैं। मैं स्वयं 1996 से इन दोनों विषयों पर बहुत सारे प्रश्न पूज्य सरकार श्री, पूज्य कृष्णदास जी शर्मा से, श्री राजन स्वामी जी से एवं श्री अनिल श्रीवास्तव जी से करता आया हूं। इन विषयों पर दिन प्रतिदिन मुझे नये नये दृष्टिकोण प्राप्त हो रहे हैं और इससे पूज्य सरकार श्री द्वारा दिये गये सुत्र ''**वाणी मंथन, रहनी और चितवन का कोई विकल्प नहीं है''** की पूर्ति नजर आती है। श्रीमुख वाणी तो बेशक है ही, बेशक तो हमें खुद होना है। अध्यात्म के विविध विषयों पर बिना शक किये, एक एक बात को कसौटी के ऐहरण पर रखे बिना, तो कोई बेशक हो ही कैसे सकता है।

अतः सुशांत जी ने वाणी मंथन उपरांत इन दो प्रमुख विषयों पर कुछ नये ही प्रश्न छेड़ दिये हैं, उनके प्रश्नों ने समाज के बहुत सारे विद्वानों को सोच में डाल दिया है। परम्परागत मान्यताओं को वे एक नये दृष्टिकोण से अपनी संशोधन लेबोरेटरी में ले जाते हैं और कुछ नये निष्कर्ष पर पहुंचते हैं।

श्री राजन स्वामी जी, जिनको मैं श्रीमुखवाणी के ज्ञान के क्षेत्र में अपना मार्गदर्शक मानता आया हूं, इनसे भी मेरी इन विषयों पर चर्चा होते रहती है। और श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ सरसावा द्वारा इन्हीं विषयों

पर प्रकाश डालते हुए बहुत ही बड़ी संशोधनात्मक शक्ति को लगाकर यथार्थ दीपिका नामक ग्रंथ अभी अभी प्रकाशित हुआ है। विश्वास करता हूं कि इस पुस्तिका में सुशांत जी ने जो भी विचार प्रस्तुत किये हैं उसे यथार्थ दीपिका का मंथन करके, अपने प्रारम्भिक लेखों में आवश्यक सुधार करके ही सुंदरसाथ समाज को ज्यादा से ज्यादा लाभान्वित करने का प्रयास किया है।

समाज के सभी विद्वानों से मेरी यही प्रार्थना हमेशा रही है कि सत्य दर्शन कराने के प्रयास में स्नेहदर्शन कायम रहे यह परम आवश्यक है। ये हमेशा याद रहे कि इश्क के सागर में से इल्म का सागर प्रगट होता है। अब इल्म का मंथन करके इश्क की लज्जत लेनी है अतः इल्म में से इश्क प्रेम ही फलित होना चाहिए।

आज विश्व में एक ही विषय पर अनेक परस्पर विरोधी विचारध ाराएं चल रही हैं, ज्ञान का प्रचार इतनी प्रबल गति से चारों ओर फैल रहा है। अतः हमें नम्रता पूर्वक हर प्रकार के वाणी मंथन एवं संशोधनों का, हर एक दृष्टिकोण का स्वागत एवं सम्मान करें। और इसे अद्वैत की नजर से देखने का प्रयास करें। शब्दों में शब्दातीत को झांकने का प्रयास करें। और ऐसे प्रयोगों में से आध्यात्मिक उन्नति लक्षी सारभूत बातों को निकालकर सभी सुंदरसाथ में खुले दिल से बांटें। आखिर सबको धनी की ही बख्शीश है। हमारे समाज के अग्रणी विद्वतजन परस्पर खेलदिली पूर्ण वार्तालाप बनाये रखते हुए हम सब सुंदरसाथ की सेवा करते रहें। धाम धनी से नम्र प्रार्थना करता हूं कि वे उन सबको जागनी सेवा के लिये बहुत बल प्रदान करें।

प्रणाम जी

नरेंद्र पटैल

यू. एस. ए.

दो शब्द

प्रणाम जी

सृष्टि के प्रारम्भ से ही आत्मा का स्वरूप, परमात्मा का स्वरूप, उनका दुनिया में अवतरण एवं उनका साक्षात्कार जिज्ञासा एवं खोज का विषय रहा है, अनेकों ऋषि–मुनि एवं संतजनों ने अपने अनुभव के आधार पर इस विषय में अपने विचार व्यक्त किये हैं।

कोई कहता है कि भगवान दुनिया में 24 अवतार लेते हैं। कोई कहता है कि परमात्मा का अवतार नहीं होता है। बाईबिल में पिता, पुत्र, पवित्रात्मा तीन स्वरूपों की बात आती है। इसी प्रकार कुर्आने पाक में भी अल्लाह तआला, मुहम्मद पैगम्बर एवं जिब्रील फरिश्ते की बात आती है। हिंदूओं में भी ''ब्रह्मविदो ब्रह्मैव भवति'' की बात आती है।

चूंकि परमात्मा समस्त ग्रंथों में एक ही कहा गया है। इस कारण कुछ भक्तजन एक परमात्मा की ही पूजा–बंदगी करना उचित मानते हैं। कुछ तीनों को पूज्यनीय मानते हैं। श्री प्राणनाथ जी द्वारा अवतरित श्री कुलजम स्वरूप साहेब तारतम वाणी के प्रकाश में इन तीनों के बीच उचित संबंध समझ में आने पर एक परमात्मा से जुड़ने का मार्ग प्रशस्त हो जाता है।

निजानंद परम्परा में भी मूल वाणी एवं बीतक के अतिरिक्त ब्रह्ममुनियों द्वारा रचित अनेकों वाका ग्रंथ उपलब्ध हैं, वर्तमान में अनेकों सुंदरसाथ विद्वानों द्वारा रचित अनेकों साहित्य भी पाये जाते हैं, जिनमें अनेकों विरोधाभास होते हुए भी बुद्धिजीवी वर्ग उनसे पूरा लाभ उठाता रहा है।

पूज्य सरकार श्री जी ने आत्म जागृति का एक मंत्र दिया था ''वाणी मंथन, रहनी और चितवनी का कोई विकल्प नहीं है।'' किंतु आज ज्यादा से ज्यादा सुंदरसाथ वर्ग मात्र चर्चा पर आश्रित है, वाणी मंथन एवं चितवनि से दूर है। ''ए सत वाणी मथ के, लेऊं जो इनको सार'' की प्रतिज्ञा मात्र मंत्र तक ही सीमित रह गयी है। वाणी एक ज्ञान का सागर है। इसका

जितना मंथन किया जायेगा उतने ही रत्न इसमें से निकलते हैं, निकलते रहेंगे और आत्मा का श्रृंगार होता जायेगा। यह आवश्यक भी है।

इस ग्रंथ में मुख्य रूप से निम्न विषयों पर विवेचना की गई है।

1. पांच शक्तियों का विवरण,
2. जोश, आवेश, पवित्रात्मा, जिब्रील में एकरूपता
3. दिल अर्श का सहीं मायना क्या है
4. दिल अर्श बनाने का/धारणा ध्यान का सहीं तरीका क्या है।
5. सेहेरग से नजदीक का सहीं माएना क्या है।

पांच शक्ति, जिब्रील एवं दिल अर्श होने के विषय में भी कई साहित्य पहले भी लिखे गये हैं, उनके विचारों का मैं सम्मान करता हूं, क्योंकि उनका उद्देश्य भी आत्म जागृति ही है एवं अपने विचार व्यक्त करने का सभी मनुष्य/सुंदरसाथ को अधिकार होता है। यदि सुंदरसाथ निष्पक्ष हृदय से इस लघु ग्रंथ का भी पठन करेगा तो इससे अवश्य उनके हृदय में ज्ञान का प्रकाश होगा एवं सत्य का मार्ग प्रशस्त होगा।

समस्त सुंदरसाथ की चरणरज
महात्मा सुशांत निजानंदी

अनुक्रमणिका

क्र.	विषय	पेज नं.
1.	ए पांचों मिल भई महामत	9
1.1.	जिब्रील का अक्षरधाम तक जाना	9
1.2.	जोश और आवेश की एकरूपता	10
1.3.	क्या जिब्रील कोई फरिश्ता है	13
1.4.	कृष्ण व मुहम्मद में एक ही शक्ति	14
1.5.	जिब्रील द्वारा ज्ञान अवतरण	16
1.6.	धाराभाई, लक्ष्मीदास प्रसंग	18
1.7.	अछर के दोऊ चसमें	21
1.8.	पिता, पुत्र, पवित्रात्मा	24
1.9.	ईसा, मुसा, मुहम्मद महदी, विजयाभिनंद एक हैं	24
1.10.	मुहम्मद की तीनों सूरतें	25
1.11.	इस्लामी ग्रंथों में परब्रह्म एवं परमधाम	28
1.12.	मुहम्मद की महिमा	31
1.13.	ईश्वरीय ग्रंथों में एकरूपता	32
1.14.	खसम न होवे दोए	36
1.15.	फरिश्तों का विवरण	40
1.16.	पांच शक्तियों का विवरण	46
1.17.	हुकम की व्याख्या	47
1.18.	तारतम शक्ति का विवरण	48
2.	अर्श कह्या दिल मोमिन	50
2.1.	नजर से दिल अर्श	52
2.2.	वाणी से दिल अर्श	53
2.3.	स्वरूप से दिल अर्श	57
2.4.	दिल में प्रतिबिम्ब–विवेचना	59
2.5.	भविष्य कथन	66

अनुक्रमणिका

क्र.	विषय	पेज नं.
2.6.	शरीर के दिल में ध्यान–विवेचना	70
2.7.	दुनिया वालों के दिल में परब्रह्म–विवेचना	70
2.8.	सेहेरग से नजदीक का आशय	71
2.9.	अब हुकमें द्वारा खोलिया – विवेचना	79
2.10.	हक बैठे दिल मोमिन – विवेचना	82
2.11.	इन गुन्हेगारों के दिल को – विवेचना	83
2.12.	वह मोमिन देखे दिल अर्श में – विवेचना	84
2.13.	पट एही अपने दिल को – विवेचना	88
2.14.	हक अर्श कर बैठे दिल को– विवेचना	93
2.15.	सब मोमिनों को सौंपिया – विवेचना	95
2.16.	दिल मोमिन का अर्श है – विवेचना	97
2.17.	कुंजी तेरा दिल मोमिन – विवेचना	98
2.18.	ताला द्वार न कुंजी खोलना – विवेचना	99
2.19.	तुमें अर्स देखाया दिल में – विवेचना	100
2..20.	अरस खुदा का जे – विवेचना	103
2..21.	अंतर अंदर तुम – विवेचना	105
2..22.	बखत महंमद के उठने – विवेचना	105
2..23.	जो लों पिऊ सुध न हती – विवेचना	108

ऐ पांचों मिल भई महामत

प्यारे सुंदरसाथ जी, पांचों शक्तियों के विषय में सुंदरसाथ में विचारधाराओं–मान्यताओं में काफी भिन्नताएं पायी जाती हैं। वाणी में सभी संशयों का समाधान मौजूद है। हमें सर्वप्रथम इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि यहां पांच शक्तियों का वर्णन है न कि पांच स्वरूपों का।

श्री धनी जी को जोस आतम दुलहिन, नूर हुकम बुध मूल वतन।
ऐ पांचों मिल भई महामत, वेद कतेबों पहुंची सरत।। प्र. हि. 37/101

सर्वप्रथम मैं जोस पर अपने विचार रखना चाहूंगा।

जिब्रील का अक्षर धाम तक जानाः– सामान्य रूप से ऐसा माना जाता है कि जबराईल जोश का एक फरिश्ता है, जो सत्स्वरूप से आगे नहीं जा सकता है। सबसे पहले मैं यह बात स्पष्ट कर देना चाहता हूं, वाणी में जिब्रील के सत्स्वरूप तक रूकने का कहीं वर्णन नहीं है।

छोटा कयामतनामा में स्पष्ट लिखा है कि यमूना जी व हौजकौसर तक जिब्रील साथ था।

कहूं पेहेले जंगल जरी जवेर, रोसन नूर झलकत।
जोए किनारे दरखत, पाक खुसबोए बेहेकत।।
देख्या हौज अर्स का, द्योहरियां गिरदवाए।
और जंगल पूर मोतियों से, दिया महंमद को देखाए।।
इहां लग साथ जबराईल, पोहोंच्या इन मकान।
कहे आगे मेरे पर जलें, चढ़ सक्या ना चौथे आसमान।।

छो. क. 2/8, 9, 10

सनंध में भी स्पष्ट रूप से अक्षर धाम का वर्णन करते हुए कहा है कि यहां तक जबराईल आया लेकिन इससे आगे नहीं जा सका।

नूर मकान जिमी असल, असल बन चौफेर।
पशु पंखी असल, खेलत घेरों घेर।।40
नूर जिमी बन नूर जल,आकास वाए सब नूर।
नूर पसु पंखी द्वारने, नूर सब ससि सूर।।41
रास मिश्त लेहेरें कही, कही नूर मकान की विध।
आगे तो नूर तजल्ला, सो ए देऊं नेक सुध।।45
जहां पर जले जबराईल, इतथें आगे न सके चल।
दरगाह अर्स अजीम की, हक हादी रूहें असल।। सनंध 39/40, 45, 46

अर्थात् अक्षर के रंगमहल और उसके चारों तरफ वनों, पशु–पक्षियों की शोभा का वर्णन कर दिया, इसके आगे जिब्रील नहीं जा सका। जमूना जी तक जाने

में आपत्ति तो तब हो, जबकि वह कोई व्यक्ति हो, शक्ति तो परमधाम से आना जाना कर सकती है ना। कुछ सुंदरसाथ मानते हैं कि जिब्रील जमूना जी तक ज्ञान दृष्टि तक गया जबकि यहां प्रसंग मेअराज का है, जिसमें जिब्रील मुहम्मद साहब को लेकर परमधाम जा रहा है।

जोश आवेश की एकरूपताः– वास्तव में जिब्रील कोई फरिश्ता न होकर मात्र शक्ति है। कुछ सुंदरसाथ की विचारधारा है कि जोस और आवेश अलग अलग शक्तियां हैं, जोश छोटी शक्ति है, आवेश बड़ी शक्ति है। और आवेश ही राजजी का निजस्वरूप है। जोश तो जबराईल फरिश्ता है। उदाहरण भी दिया जाता है कि उबलते पानी में जोश और लोहे में आवेश है, किंतु यहां पानी और लोहा तो माध्यम मात्र है, अग्नि तो दोनों में ही है। उबलते पानी में भी हाथ जलेगा, दहकते लोहे में भी हाथ जलेगा। यहां मतलब पानी या लोहे से नहीं बल्कि अग्नि के तापक्रम से है। क्या मिहिरराजजी का तन लोहा और अन्य का तन पानी है। इस उदाहरण में फर्क तो मात्र लोहा और पानी ही का है, अग्नि तो वही है। यदि कोई कहे कि पानी और अग्नि में मेल नहीं है, तो यहां के पंचभौतिक शरीर और परमधाम के नूरी तन में भी तो मेल नहीं है, वहां का जोश(आवेश) यहां आ जाता है साक्षात कोई वस्तु नहीं आ सकती और एक तापक्रम के पश्चात् तो लोहा भी पिघल जाता है, तब तो उससे भी आग्नि बूझ जाती है।

कुरआने पाक के अलंकारिक कथनों के वास्तविक अभिप्राय को न समझ पाने के कारण तथा वाणी का मंथन न होने के कारण ही ये सारी भ्रांतियां हैं। कुर्आन पाक में ऐसा अवश्य कहा गया है कि जिब्रील/जोश यमूना जी के उस पार नहीं जा पाया, लेकिन मेरा संशय है कि क्या उसके आगे आवेश लेने आया? वास्तव में जबराईल मात्र कुरान का एक शब्द है। जिब्रील कोई फरिश्ता न होकर मात्र राजजी के जोश की शक्ति है। जोश और आवेश एक ही हैं किंतु इस शक्ति का संबंध सत्ता की लीला से होने से वह परमधाम की इश्कमयी भूमिका में नहीं जा सकती। परमधाम में मूल स्वरूप जो है वह इश्क का स्वरूप है, यहां इस जगत में राजजी का सत्ता का स्वरूप जोश (आवेश) लीला करता है। जोश की शक्ति ही इस संसार में किसी तन में जितने समय तक लीला करती है, वह ब्रह्मलीला कहलाता है। इसे ही कहीं जोश लिख दिया है तो कहीं आवेश।।

दो भुजा स्वरूप जो स्याम, आतम अक्षर जोस धनी धाम। प्रगट वाणी
सो सुरत ले धनी को आवेश, नंद घर किया प्रवेश।। प्रगट वाणी

जोगमाया में खेल जो खेले, संग जोस धनी के भेले।
जोगमाया में बाढयो आवेस, सुध नहीं दुख सुख लवलेस।।

प्र. हि. 37/40

योगमाया में हम जिब्रील के साथ खेले थे या राजजी के साथ? यदि आवेश ही राजजी और बड़ी शक्ति है तो ''जोश/जिब्रील के साथ खेला'' ऐसा क्यूं कहा जा रहा। फिर एक तरफ कह रहे कि ''कृष्ण जी के तन में विराजमान जोश से लीला किया'' दूसरी तरफ कह रहे कि ''जोगमाया में बाढ़यो आवेस'' यानि वृंदावन में आवेश बढ़ गया। ऐसे कैसे सम्भव है कि कृष्ण के तन में जोश और वृंदावन में आवेश।

वास्तव में जोश और आवेश एक ही है। यही राजजी का स्वरूप है, जिब्रील नामक काल्पनिक पक्षी के साथ हम कहां से खेलेंगे। कुछ सुंदरसाथ ऐसा कहते हैं कि जहां आवेश होता है वहां जोश भी होता है, लेकिन जहां जोश होता है वहां आवेश होना जरूरी नहीं। ये विचारधारा पूरी तरह आधारहीन है। यदि ऐसा है तो भी हमने रास लीला में 'आवेश के साथ खेला', ऐसा लिखा होना चाहिए था, छोटी शक्ति जोश के साथ नहीं । यदि आवेश अंतर्मुखी है और जोश मात्र तन से लीला को प्रगट कर रहा है तो वृंदावन में आवेश कहां से आ गया (**जोगमाया में बाढ़यो आवेश**)। आवेश के साथ जोश का होना मान भी लें तो भी प्रश्न उठता है कि आवेश के साथ जोश देना क्यूं पड़ता है,

दियो जोस खोले दरबार, देखाया सुन्य के पार के पार। प्र. हि. 37/73

प्र. गु. में इस चौपाई में जोश की जगह आवेश कहा गया है।

आवेस अंग आपी आधार, देई तारतम उघाड़या बार। प्र. गु. 37/20

महामति जी के तन में यदि आवेश (बड़ी अग्नि) स्थायी रूप से है तो जोश (छोटी अग्नि) आने जाने की घटना क्यूं होती है। क्या कहीं लिखा है कि कृष्ण जी के तन में तीन शक्तियां अक्षर की आत्मा, जोश और आवेस थीं। रासलीला के समय जब मूल स्वरूप राजजी ने बांके बिहारी के तन से जोश खींचा **''जब जोश लियो खैंचकर''** तब क्या आवेश वहीं रह गया था? यदि आवेश स्रोत अग्नि है, और जोश गर्मी है तो स्रोत अग्नि को खींचे बिना गर्मी को कैसे खींचा जा सकता है। यह कैसे सम्भव है कि जोश खींच लिया और आवेश श्यामाजी में रख दिया। वाणी में सर्वत्र जोश–आवेश को समान अर्थ में प्रयोग किया है, कहीं भी ऐसी चौपाई नहीं जिससे दो अलग शक्ति होने का पता चले।

कई सुंदरसाथ कहते हैं कि आवेश राजजी के साक्षात्कार का स्वरूप है और जिब्रील एक शक्ति का स्वरूप है। यहां प्रश्न उठता है कि क्या आवेश का कार्य मात्र दर्शन देना है? वाणी अवतरण, जागनी लीला आदि किस शक्ति से होता है? आवेश स्वयं राजजी हैं तो उसे देने वाला कौन है?

श्री सुंदरबाई स्यामाजी अवतार, पूरन आवेस दियो आधार।। प्र.हि. 5/1 यहां पूर्ण आवेश देने की बात क्यूं कही जा रही है? क्यूंकि आवेश भी कम अधिक कार्य अनुसार दिया जाता है। फिर पूर्ण आवेश देने के बाद भी जोगमाया की निंद्रा क्यूं कहा गया है? **''आवेस जाको मैं देखे पूरे, जोगमाया की नींद होय। क.हि.23/46''** क्यूंकि ज्ञान व जागृति में जोश (आवेश) के साथ निजबुध, हुकम, तारतम ज्ञान की भूमिका भी होती है।

शुकदेव जी के प्रसंग में भी समानांतर चौपाईयों में एक जगह जोश लिखा है और एक जगह आवेश लिखा है।

त्यारे भागे आवेस कही पंचध्यायी, रास बरनन ना हुआ तिन तांई।। प्र. गुज. 33/10तब भागे जोस कही पंचध्यायी, रास बरनन ना हुआ तिन तांई।।प्र.हिं. 33/20इससे स्पष्ट है कि जोश व आवेश एक ही बातें हैं। कई सुंदरसाथ कहते हैं कि जोस राजजी का कहा है और आवेश अक्षर का कहा है, ऐसा कैसे सम्भव है जबकि समानांतर चौपाई में कहा जा रहा है, क्या पूर्वोक्त चौ. ''आवेस अंग आपी आधार''''दियो जोश खोले दरबार'' में भी इसी प्रकार कहा जायेगा कि आवेश अक्षर का है और जोश राजजी का।

कुछ सुंदरसाथ कहते हैं कि जोश और आवेश दोनों ही हिंदी के शब्द हैं, तो क्या हिंदी के पर्यायवाची शब्द वाणी में प्रयोग नहीं किया गया है। प्यार और प्रेम दोनों ही हिंदी के शब्द हैं। क्या ''संग जोश धनी के भेले' चौ. में जोश के अर्थ में अक्षर के आवेश के साथ रासलीला खेला माना जायेगा? कदापि नहीं।

यहां मुख्य बात यह है कि अक्षर तो फरामोशी में है तो उसका जोश/आवेश कैसे आ सकता है।यदि राजजी के अंदर ही सत् अंग कहा जाये तो भी जिब्रील/जोश का राजजी के अंदर से ही आना सिद्ध होता है। किंतु पांच शक्ति की चौपाई में महामति जी के अंदर धनी के जोश को अक्षर का आवेश नहीं माना जा सकता। फिर अक्षर के जोश और अक्षर के आवेश और धनी के जोश में से जिब्रील किसे माना जायेगा। वास्तव में इस ब्रह्माण्ड में तो ब्रह्मसत्ता/हुकम भी राजजी का ही है। ''ए माया छे अति बलवंती, उपनी छे मूलधणी थकी'। जिस प्रकार प्रधान मंत्री शासन में भी सत्ता होती है और राष्ट्रपति शासन में भी लेकिन दोनों सत्ता में अंतर होता है। राष्ट्रपति शासन में राष्ट्रपति का हुकम चलता है। इसी प्रकार पुलिस शासन और मिलेटरी शासन में भी बहुत अंतर होता है। उसी प्रकार अक्षर ब्रह्म की सत्ता और अक्षरातीत की सत्ता में भी कुछ तो अंतर होता ही है। इसीलिये तो कहा गया है ''ए माया छे अति बलवंती, उपनी छे मूलधणी थकी'।

निम्न चौपाईयों से स्पष्ट हो जाता है कि ब्रज लीला में राजजी के स्वरूप जोश/जबराईल से ही ब्रह्मात्माओं ने आनंद प्राप्त किया था।

अहीरों की कौम में, जित महत्तर नंद कल्याण।
सुख लिया ब्रज वधुयें, औरों न हुई पेहेचान।।
महत्तरों की कौम में, जित हूद कील सिरदार।
जोत रसूल टापू मिने, दिया जबराईलें आहार।। खुलासा 13/5, 6

जबराईल किसे भोजन देगा ? वास्तव में कृष्ण के तन में विराजमान राजजी के जोश (आवेश) ने गोपियों के तनों में विराजमान आत्माओं को आत्मिक सुख प्रदान किया। यह निम्न चौपाई से भी स्पष्ट है।

आया सरूप कर नये सिनगार, भजनानंद सुख लिये अपार।
दोऊ आतम खेले मिने खांत, सुख जोस दियो कई भांत।। प्र. हि. 37/40

क्या जिब्रील कोई फरिश्ता हैः– कुर्आन पाक व हदीसों में वर्णन है कि मुहम्मद साहब को जब भी कोई संशय होता था, तो वे जिब्रील से पूछते थे, जिब्रील जाकर खुदा से पूछता था और वापस आकर मुहम्मद साहब को जवाब देता था और खुदा तआला का आदेश सुनाता था। यहां यह तथ्य विचारणीय है कि जब जिब्रील परमधाम जा ही नहीं सकता तो खुदा से कैसे पूछता था, और खुदा का आदेश कैसे लाता था। यदि कोई कहे कि परमधाम से बाहर खड़े खड़े आदेश प्राप्त कर लेता था, तो सवाल उठता है कि क्या वह यहीं खड़े खड़े आदेश नहीं प्राप्त कर सकता था? वास्तव में राजजी के दिल से जिब्रील/जोश का लिंक जुड़ा होता है। यह सारा वर्णन अलंकारिक रूप से किया गया है।

इसका स्पष्टीकरण सनंध की वाणी में किया गया है।

ना न्यारा आसिक मासूक, ए तो एकै किया प्रवान।
तो बीच कह्या क्यूं फरिश्ता, जो जाए आवे दरम्यान।।सनंध 36/58

यहां प्रश्न किया जा रहा है कि जब खुदा को आशिक और मुहम्मद को माशूक कहा गया है तो बीच में फरिश्ते की क्या आवश्यकता हुयी। क्यूंकि आशिक माशूक उन्हें ही कहते हैं जिनके बीच में कभी जुदागी ना हो। इसका जवाब अगली चौपाईयों में दिया गया है।

एक सूरत दो बीच में, ए जो फिरे दरम्यान।
तिनको कहिये फरिस्ता, नूर जोस अंग का जान।।
रसूल आया हुकमें, तब नाम धराया गेन।
हुकम बजाये पीछा फिरया, तब सोई ऐन का ऐन।। सनंध 36/61, 62

अर्थात् जिब्रील कोई फरिश्ता नहीं है बल्कि राजजी और मुहम्मद साहब के बीच में आने जाने वाली एक शक्ति मात्र है। जिसे कुर्आने पाक में अलंकारिक भाषा में जिब्रील कह दिया गया है। यही जोश (आवेश) शक्ति संसार में किसी

तन में आती है तो वह तन लौह अग्निवत् परब्रह्म (गेन) की शोभा पाता है, और वह शक्ति जब अपने मूल स्वरूप में वापस पहुंचती है, तब (ऐन का ऐन) पहले के समान परब्रह्म का मूलस्वरूप हो जाता है। जरा ये तो विचार कीजिये कि जिब्रील कहां से आता जाता था, 'एक सूरत दो बीच में' राजजी और मुहम्मद साहब के बीच में ही तो आता जाता था या अक्षर ब्रह्म के पास से आ जाता था। **"नूर जोस अंग का'** चरण से स्पष्ट है कि राजजी के अंग की ही नूरी जोश की शक्ति है, जिसे कुर्आन की अलंकारिक भाषा में जिब्रील कहा गया है।

कई सुंदरसाथ की मान्यता है कि ब्रज में कृष्ण जी के अंदर जोश और आवेश दोनों था लेकिन मुहम्मद साहब के अंदर मात्र जोश था आवेश नहीं। उन्हें ब्रह्मलीला के अंतर्गत नहीं माना जा सकता। यहां प्रश्न उठता है कि यदि महंमद साहब के अंदर मात्र जोश था आवेश नहीं तो उनकी लीला को तीसरा दिन क्यूं माना गया है? ब्रज रास से भी ऊपर उन्हें तीसरी भिश्त में क्यूं अखण्ड किया गया है? सेवा पूजा में गौरी आरती में मुहम्मद साहब के प्रति **"तीसरी आरती श्याम सुहायी" "हुकम के स्वरूप की जय"** क्यूं कहा गया है। ब्रज लीला में अक्षर की आत्मा पर राजजी का आवेश आ सकता है तो अरब में अक्षर की आत्मा पर क्यूं नहीं। यदि मुहम्मद साहब को अक्षर ब्रह्म कहेंगे तो क्या ब्रज लीला के विषय में यह कहा जा सकता है कि हमने अक्षर ब्रह्म के साथ लीला किया। वाणी में स्पष्ट रूप से कहा गया है– **"जोत रसूल टापू मिने" खुलासा 13/6, अर्थात्** ब्रज मण्डल **("टापू ब्रज अखण्ड")** में भी रसूल साहब की ही ज्योत थी यानि शक्ति थी। निम्न चौपाई में भी यही बात दर्शायी गयी है।

समारी किस्तीय को, तित मोमिन लिए चढ़ाए।
सो स्याम चिराग महंमद की, जिन मोमिन पार पोहोंचाए।।खुलासा13/13

अर्थात् रास लीला में कृष्ण जी में मुहम्मद साहब की ही शक्ति थी।

कृष्ण व मुहम्मद में एक ही शक्ति :–वास्तव में दोनों ही तनों में एक ही शक्तियां विराजमान थीं, जो कि वाणी से स्पष्ट है।

ब्रज रास खेल के, आये बरारब स्याम। बीतक
श्री कृष्णजीए ब्रज रास में, पूरे ब्रह्मसृष्टि मन काम।
सोई स्वरूप ल्याया फुरमान, तब रसूल केहेलाया स्याम।। खु. 13/75
बाप फारस रूम आरब का, कह्या फुरमाने स्याम।
फुरमान ल्याये वास्ते, रसूल धराया नाम।।खुलासा13/33

अर्थात् कृष्ण के तन में विराजमान राजजी के जोश (आवेश) की शक्ति, जिसने ब्रजमण्डल में ब्रह्मात्माओं को सुख दिया था उसी ने अरब में जब

कुर्आन लाया, तो उनका नाम रसूल हो गया।

ले फुरमान जो हाथ में, केहेलाया मैं रसूल।
ऐ देखों अरवाहें अर्स की, जिन कोई जावें भूल।। सनंध 19/9
हो सैंया फुरमान ल्याये हम, आये वतन से वास्ते तुम।
इसमें खबर है तुमारी, हकीकत देखो हमारी।। ब. क. 6/1
मेहरे रसूल होए आइयां, मेहरे हक लिये फुरमान।
कुंजी ल्याए मेहेर की, करी मेहेरे हक पेहेचान।। सागर 15/32
इस्क खेल हाँसी इस्क, इस्क फरामोस मोमिन।
इस्कें रसूल होए आइया, वास्ते इस्क न पाया किन।।खिल.12/43

उपरोक्त चौपाईयों से स्पष्ट है कि स्वयं राजजी ही रसूल बनकर आये थे। वाणी में मुहम्मद साहब को स्पष्ट रूप से खुदा की 5 सूरतों में माना गया है।

तीन सरूप खुदाए के कहे, तीनो तकरार रूहों बीच रहे।
एक बृज बाल दूजा रास किसोर, तीसरे बूढ़ापन में भोर।।ब.क. 6/28
दोए सरूप कहे मिने और, किल्ली कुरान ल्याए इन ठौर।
पांच सरूप मिले इत नूर, असलू बीज माहें अंकूर।। ब.क. 6/29

अर्थात् ब्रज, रास और महामति जी ये तीन सूरतें साथ में मुहम्मद और देवचंद्रजी ये पांच स्वरूप खुदा के कहे गये हैं।

पिउ पांच बेर वास्ते, सागर में डारया आप।
सो नजरों ने आवे प्रेम बिना, बिना मेहेर या मिलाप।। प्र. 17/9

इस चौपाई से पूर्णतः स्पष्ट हो जाता है कि पांचों तनों में राजजी ही ने लीला किया है। कई सुंदरसाथ कहते हैं कि मात्र तीन लीला ही ब्रह्मलीला है, ब्रज, रास, जागनी। सहीं बात है किंतु जागनी लीला क्या मात्र मिहिरराजजी जी की है। देवचंद्र जी की नहीं, उसी प्रकार अरब में भले ही आत्माये ना आयी हों लेकिन वहां राजजी, हमारे ही वास्ते तो आये थे।

इन उमत भाईयों वास्ते, महंमद आये तीन बेर।
दुनी क्या जाने बिना निसबत, बिना इलम रात अंधेर।।मा.सा. 16/35
अव्वल खूबी अल्ला कलाम, दूजी खूबी गिरो इस्लाम।
तीसरी खूबी तीन हादी वजूद, आखिर आये बीच जहूद।। ब.क. 5/36

अर्थात् कलाम अल्ला (कुर्आन पाक और वाणी), मोमिन/ब्रह्मात्माऐं, तीनों हादी मुहम्मद स.अ.व., देवचंद्रजी और महामतिजी निजानंद सम्प्रदाय की विशेषता है।

जिब्रील द्वारा ज्ञान अवतरण :–तारतम वाणी के प्रकाश में देखें तो जिब्रील फरिश्ते द्वारा आयतें लाने के अलंकारिक कथानक का भावार्थ इस प्रकार निकलता है– मुहम्मद साहब को जब भी कोई समस्या आती थी तो वे गहन चिंतन व ध्यान में बैठ जाते थे, और तब परब्रह्म खुदा तआला की शक्ति/जोश से उनके हृदय में ज्ञान/आयतें प्रकट होती थीं। इसलिये तो कुर्आन पाक को कलाम अल्ला भी कहा जाता है। यदि जोश छोटी शक्ति है और आवेश ही राजजी का स्वरूप है तो फिर प्रश्न उठता है कि कुर्आन पाक को कलाम अल्ला क्यूं कहा गया है। हम बीतक की तरफ नजर करते हैं तो हम पाते हैं कि महामति जी के तन से भी वाणी अवतरण की प्रक्रिया इसी प्रकार की रही है। चिंतामणि जी ने कहा कि मेरे शिष्यों के सामने मेरा मान रख लिया करें तब श्री जी रात्रि में चिंतन में डूब जाते हैं कि परमधाम के आत्माओं की क्या स्थिति हो गयी है, तब राजजी की शक्ति–जोश से किरंतन अवतरित होता है, ''सुनो रे सत के बनजारे'। इसी प्रकार जोश (आवेश) की शक्ति से ही सारी वाणी उतरी है।

हब्शे के प्रसंग में चौपाई :–

यों करते चरचा, जबराईलें किया जोर।
आया जोस इन समें, कछू न रही खोर।।
और वानी निकसी मुख से, सो कलाम जंबुर के।
ज्यों ज्यों आयतें उतरीं, उत्तम बाईये लिखी ये।। बीतक 17/55, 56

यहां स्पष्ट है कि कुर्आन की आयतों के समान ही वाणी भी जिब्रील/जोश से अवतरित हुयी है, इसलिये वाणी की चौपाईयों को भी यहां आयतें लिखा है।

अनूपशहर में :–

इन समै श्री राज को, नूर जोस चढ़ियो जोर।
आए जबराइलें जोरा किया, असराफीलें किया जोर।।15
उस बखत जबराईलें, बड़ा जो किया जोर।
उतरे कलाम कादर से, करो खेल में सोर।।
तौरेत किताब में, उतरी सनंधे तीस।
सब खबर कुरान की, हकें करी बकसीस।। बीतक 39/26, 27

उपरोक्त चौपाईयों से बिल्कूल स्पष्ट है कि जोश/जिब्रील के द्वारा ही सनंध की वाणी अवतरित हुयी है।

वाणी में भी कहा है :–

तब मैं दिल में यों लिया, करों कायम चौदे तबक।
मेरे खावंद के इलम से, सबों पोंहोचाऊं हक।।
ऐसा जब दिल में आईयां, दिया जोस हकें बल।

उतरी किताबें कादर से, पोहोंच्या हुकम असल।। खुलासा 10/63, 64

अर्थात् जब महामति जी ने दुनिया को अखण्ड करने का संकल्प लिया, तब राजजी ने जोश की शक्ति दिया जिससे वाणी का अवतरण हुआ।

इस चौपाई से स्पष्ट है कि जोश के द्वारा वाणी अवतरित हुयी है, जोश प्रस्तुतकर्ता नहीं है।

लिख्या सूरज मारफत का, होसी जाहेर महंमद से।
आई अर्स रूहें गिरों अहमदी, किए जाहेर जबराईलें।। खु. 3/18

अर्थात् मारफत के ज्ञान का सूर्य मुहम्मद की हकी सूरत से जाहेर होगा ऐसा लिखा था, तो वह समय आ गया, ब्रह्मात्माऐं भी आ गयीं और जबराईल ने मारफत का सूरज जाहिर कर दिया।

निम्न चौपाईयों से बिल्कूल स्पष्ट हो जाता है कि इसी शक्ति जोश से परिक्रमा एवं सिनगार की वाणी भी अवतरित हुयी हैं।

इन विध हुआ है अव्वल, दई रूह साहेदी तहकीक।
जो कही वानी जोस में, सो साहेब दई तौफीक।। परिक्रमा 30/3
हकें दई किताबें मेहेर कर, जो जिस बखत दिल चाहे।
सोई आयत आवत गई, जो रूह देत गुहाए।। परि 30/4

अर्थात् राजजी के हुकम के अनुसार समय के साथ उनकी जोश की शक्ति के द्वारा परिक्रमा की वाणी अवतरित होते रही।

यहां चौपाईयों के लिये आयत शब्द प्रयोग किया गया है जिससे स्पष्ट है कि कुर्आन की आयतों के समान ही वाणी भी जोश की शक्ति से अवतरित है।

हुकम ल्याया जो हकीकत, सो क्यों कर ना देख्या सहूर।
ल्याया तुमारे अरस में, हुकम जबराईल जहूर।।100।। सिनगार 29
जो कीजे बरनन हक बका, होए जोस मेहेर हुकम।
निसबत हक हादीय सों, और आखिर इस्क इलम।।सिन. 1/50

इस प्रकार स्पष्ट है कि जोश (आवेश) से ही परमधाम, राजश्यामाजी का श्रृंगार वर्णन हुआ है। फर्क मात्र इतना है कि 1735 के बाद अवतरित वाणी (राजश्यामाजी के श्रृंगार) में निजबुद्धि की भी भूमिका महत्वपूर्ण हैं। ऐसा कोई भी कदापि नहीं कह सकता कि 1735 से पहले अवतरित किताबें जोश से और बाद की आवेश से उतरी हैं। क्योंकि दोनों समय में समान जोश (आवेश) की शक्ति थी। यदि जोश रंगमहल की लीला–स्वरूप नहीं जानता और आवेश सब जानता है तो वि. सं. 1735 तक निजबुद्धि के आने का इंतजार क्यूं करना पड़ा। बिना निजबुद्धि के ही क्यूं ना वर्णन कर दिया गया। यदि आवेश सब जानता है तो श्रीदेवचंद्र जी के लिये क्यूं कहा गया है – **"आवेस जाको मैं देखे पूरे, जोगमाया की नींद सोय"** । देवचंद्र जी के तन में पूर्ण आवेश लिखा

है लेकिन फिर भी पूर्ण ज्ञान नहीं था। **''सो लक्ष अव्वल को ल्याये रूहअल्ला, पर ना था आखिरी इलम पूरन। सिनगार ''** यह कथन ''**जिब्रील से छिपाये''** कथन से समान अर्थ रखता है। आवेश स्वरूप से ज्ञान छिपाने वाला कोई और नहीं बल्कि मूल स्वरूप ही है। ज्ञान प्रगटीकरण राजजी के हुकम के अनुसार अन्य शक्तियों जागृत–निजबुद्धि, तारतम शक्ति की सहायता से अपने समय से होता है।

इन समे ऐसा हुआ, सब भये कारज सिद्ध।
अपने निजवतन की आई जागृत बुध।। बीतक

वाणी में अवश्य कहा गया है कि ''केहेलाया हिरदे बैठ साक्षात्'' किंतु वाणी में ही यह भी कहा गया है ''साहेब के हुकमे गावत है महामत'' परमधाम से साक्षात् राजजी तो क्या एक कण भी यहां नहीं आ सकता। यहां जोश के लिये ही राजजी कहा जा रहा है। जोश के आने से ही वाणी में दिल अर्श कहा गया है।

जोस गिरो मोमिनों पर, हकें भेज्या जबराईल।
रूहें साफ रहें आठों जाम और अबलिश दुनी दिल।।खु 1/85
अर्स से आया असराफील, दिया कई विध सूर बजाए।
सो सोर पड़या ब्रह्माण्ड में, पाक किए काजी कजाए।।खु 1/86
तो अर्स कह्या दिल मोमिन, पाया अर्स खिताब।
इतहीं गिरो पैगम्बरों, काजी कजा इत किताब।।खु 1/87

महामति जी ने इन दोनों की सहायता से ही कजा कर रहे हैं

'**धाराभाई–लक्ष्मीदास प्रसंगः–**यहां एक तथ्य और चौंका देने वाला है कि महामति जी के द्वारा वाणी अवतरण के समय जोश के शक्ति के आने का वर्णन है। जबकि धाराभाई, लक्ष्मीदास जी के सामान्य प्रसंगों में आवेश शक्ति के आने का वर्णन किया गया है।

धाराभाई प्रसंग :–

मोको आवे तहां आवेस, दिन में होवे दीदार।
मैं श्रीराज की बातें सब कहों, श्री धाम लीला विस्तार।। बी. 29/5

यहां धाराभाई कह रहे हैं, उनके अंदर राजजी का आवेश आता था और उन्हें राजजी का दीदार होता था और वे परमधाम की चर्चा करने लगते थे।

लक्ष्मीदास प्रसंग :–

लक्ष्मीदास के घर में, उपली दृष्ट भई जोर।
राज दीदार देवहीं, कछु न दिल में खोर।।
नित आरोगन आवहीं, आवत बड़ा आवेस।

तिस वास्ते माया का, कछु न रहया लवलेस।। बी. 35/4, 5

अर्थात् लक्ष्मीदास जी के अंदर बहुत आवेश आ जाता था, और उन्हें राजजी का दीदार होता था। (यहां हांसी की लीला कर रहे हैं)

वास्तव में जोश और आवेश दोनों एक ही हैं, जोश (आवेश) की लीला मात्र दर्शन देना नहीं है बल्कि, वाणी अवतरण एवं अन्य लीलाएं भी हो सकती हैं। सुंदरसाथ में ऐसी विचारधारा भी सुनने को मिलती है कि सुंदरसाथ को आवेश मात्र मारिफत की अवस्था में प्राप्त होता है, क्या धाराभाई और लक्ष्मीदास जी की मारिफत अवस्था थी। कभी इसका विराधाभास कथन भी सुनने को मिलता है कि ब्रह्ममुनियों और परमहंसों में मात्र जोश की लीला होती है, आवेश की नहीं। कभी ऐसा भी कह दिया जाता है कि राजजी स्वयं सभी सुंदरसाथ के दिल में आकर बैठे हैं, ये सारी बातें आपसे में ही विरोधाभास रखती हैं। कई सुंदरसाथ कहते हैं कि आवेश साक्षात्कार का स्वरूप है और जोश अक्षरधाम तक ले जाने वाली शक्ति है, जबकि यहां ''मोको आवे तहां आवेस'' से स्पष्ट है कि धाराभाई को उनके अंदर आवेश (जोश) आने से ध्यान जैसी स्थिति में दर्शन होता था। जबकि लक्ष्मीदास जी को प्रत्यक्ष रूप से चमत्कारिक रूप से आवेश (जोश) दर्शन देता था।

साहेब के हुकमें ए बानी, गावत हैं महामत ।
निज बुध नूर जोस को दरसन, सबमें ए पसरत।। कि. 59/८
नींद उड़े रहे न सुपना, और सुपने में देखना हक।
मेहेर इलम जोस हुकमें , हक देखिए बेसक।। सिन4/8

जोश (आवेश) शरीर के अंदर आने से ध्यान जैसी अवस्था में दर्शन होता है जबकि शरीर में आये बिना भी जोश (आवेश) चमत्कारिक रूप से कभी कभी भौतिक चक्षुओं से दर्शन दे देता है। जैसे देवचंद्र जी को कच्छ के रण में, स्याम जी के मंदिर में, मिहिरराजजी को अरब में आरब के रूप में दर्शन हुआ और आज भी कई सुंदरसाथ को अपने घरों में या मंदिरों में या अन्य स्थानों में दर्शन या चमत्कारिक रूप से राजजी का अनुभव होता है। इसे ही कहा गया है ''**देखे बिना जोश**'' यदि जोश और आवेश को अलग अलग माना जाये तो ऐसा कैसे सम्भव है कि आवेश को यहां छोड़कर जोश दर्शन कराने परमधाम ले जाये।

औरंगाबाद के प्रसंग में मिहीन खां, गाजी खां, अव्वल खां आदि को जोश आने का प्रसंग आता है, क्योंकि जोश (आवेश) का कोई एकमात्र वाणी अवतरण का कार्य नहीं है। ब्रह्मलीला से संबंधित सारे कार्य ईमान, सेवा, समर्पण आदि जोश के द्वारा ही सम्पादित होते हैं। इसी कारण मस्कत बंदर में महावजी भाई के प्रसंग में भी माना जाता है कि वे नाराज होकर रात में जब

दुकान में सो रहे थे तब जिब्रील/ जोश स्वरूप ने उन्हें थप्पड़ मारा। किंतु यहां पर भी आश्चर्य जनक रूप से बीतक में लिखा है कि उन्हें राजजी ने थप्पड़ मारा।

जब सोया रात में, अपनी दुकान में।
रातें मारा तमाचा राज ने, हुई दहसत जोर इनको।। बी. 26/25

क्योंकि इस संसार में जोश (आवेश) ही राजजी का स्वरूप कहलाता है। राजजी यहां मात्र लाड़ लडाने नहीं आये हैं, इस संसार में आत्माओं को दुख भी देना पड़ता है। । यहां दुख भी धनी का लाड है।

धनी सनकुल होवहीं, तो दुख आवे तिन।
इस दुनिया में चाह कर, दुख ना लिया किन।।

कुछ सुंदरसाथ मानते हैं कि लालदास जी ने ऐसे ही लिख दिया होगा। उनके विचारों पर आश्चर्य होता है, जबकि इसे मूल बीतक कहा जाता है, उसमें महामति जी की छाप भी है।

थोड़े देर के लिये किसी के तन में जोश/आवेश शक्ति आने से कोई तन प्राणनाथ नहीं हो जाता है, क्या धाराभाई और लक्ष्मीदास प्राणनाथ कहला सकते हैं? नहीं क्योंकि वाणी में कहा है कि ''हिस्सा देऊं आवेश का, सैंयन को सब पर'' अर्थात् महामति जी कह रही हैं कि मैं आवेश शक्ति का अंश सभी सुंदरसाथ को दूंगी, जिससे वे माया को छोड़कर धनी की याद में लग सकेंगे। क. हि. में कहा है – **''अंग दिये बिना आवेश, नहीं प्रेम उपाय। आवेश दे करूं जागनी, लेऊं अंग में मिलाए।''** बिना जोश (आवेश) के इश्क भी नहीं आ सकता। कई सुंदरसाथ अनुमान लगाते हैं कि शायद यहां ज्ञानावेश देने की बात कही जा रही है। किंतु वाणी में कहीं भी ''ज्ञानावेश या ज्ञान का आवेश या ज्ञान का जोश'' ऐसा कोई शब्द नहीं आया है। दूसरी बात ज्ञान का हिस्सा क्यों देंगे, पूरा ज्ञान ही दे दिया है। कलश गुजराती में समानांतर चौपाई में स्पष्ट कहा है **''मारा आवेस माहें थी भाग देऊं, साथ ने सारी पेर।** क.गु. 10/16'' अर्थात् मेरे अंदर विराजमान राजजी के आवेश में से अंश दूंगी। जब चौपाई स्पष्ट कह रही है तो फिर यह कहना निरर्थक है कि आवेश के टूकड़े नहीं हो सकते क्योंकि यह आवेश एक शक्ति मात्र है, जिसे प्रदान करने वाले भी स्वयं राजजी हैं ''पूरन आवेस दियो आधार' यहां 'पूरन' शब्द से स्पष्ट है कि पूरा या आंशिक आवेश देना राजजी पर निर्भर है। छठे दिन की लीला में कार्य के अनुसार आंशिक रूप से आवेश(जोश) शक्ति सब सुंदरसाथ को प्राप्त होगी, लेकिन प्राणनाथ की शोभा महामति जी के लिये ही है क्योंकि पूर्ण शक्ति एवं पांचों शक्तियां उनके ही तन में हैं। और छठे दिन की लीला में पूर्ण शक्ति किसी को भी प्राप्त नहीं हो सकतीं।

''कोई दूजा मरद ना कहावहीं, एक मेहेंदी पाक पूरन।
खेलसी रास मिल जागनी, छत्तीस हजार सैंयन।।''

कहा जाता है कि छत्रशाल जी के अंदर सात वर्ष तक आवेश लीला हुई, तो क्या छत्रशाल जी प्राणनाथ कहलाये? क्या सात वर्ष के बाद छत्रशाल जी के तन से राजजी ने आवेश वापस ले लिया जबकि उनका तन छूटा नहीं था, और जागनी सेवा कार्य वे कर ही रहे थे। (सात वर्ष सं. 1751 से 1758 तक होते हैं जबकि उनके तन से जागनी सेवा कार्य सं. 1775 तक चलता है।) महामति जी के समाधिस्थ होने के बाद कई सुंदरसाथ ब्रह्ममुनियों द्वारा जागनी कार्य एक साथ अलग अलग स्थानों पर हुआ, किसी भी एक सुंदरसाथ को राजजी या प्राणनाथ की शोभा नहीं मिली। क्योंकि प्राणनाथ जी ने अपनी गादी पर किसी सुंदरसाथ को नहीं बल्कि वाणी को पधराया था क्योंकि छठे दिन की लीला में ब्रह्मवाणी ही प्राणनाथ जी का स्वरूप है।

कुछ सुंदरसाथ 12 मोमिनों के कसाला प्रसंग के बाद ऐसा मानते हैं कि श्री जी ने जिब्रील को पुकारा और प्रलय कर देने कहा, तब उनके अंदर विराजमान राजजी ने कहाः–''नहीं महामति''। आश्चर्य की बात है कि आदेश श्री जी ने दिया और राजजी ने रोका महामति को। क्या पुकारते समय राजजी नहीं थे। यदि श्री जी के अंदर जोश से अलग हटकर एक बड़ी शक्ति 'आवेश' थी तो श्री जी ने उसी से प्रलय क्यूं नहीं कर दिया। क्यूं छोटी शक्ति को पुकारा। वास्तव में ये सारा प्रसंग काल्पनिक और निराधार है। इसका बीतक वाणी में कोई प्रमाण नहीं है।

वाणी में जैसे प्रेम व इश्क शब्द समानार्थी रूप में प्रयोग किया गया है वैसे ही जोश और आवेश शब्द भी समान अर्थ में प्रयोग किया गया है।

दुख थे विरहा उपजे, विरहे प्रेम इस्क।
इस्क प्रेम जब आईयां, जब नेहेचे मिलिये हक।।
लाल अधुर हंसत मुख हरवटी, नासिका तिलक निलवट भौंहें केस।
श्रवण भूखण मुख दंत मीठी रसना, ए देख दरसन आवे जोस आवेस।।

कुछ समय पहले प्रेम और इश्क में भी अंतर माना जाता था, कहा जाता था कि प्रेम योगमाया में है और इश्क परमधाम में। आज सभी मानते हैं कि प्रेम इश्क दोंनों एक ही हैं। कई सुंदरसाथ कहते हैं कि प्रेम और इश्क अलग अलग भाषा के शब्द हैं लेकिन जोश और आवेश एक ही भाषा के शब्द हैं। तो मेरा प्रश्न है क्या एक ही भाषा का पर्यायवाची शब्द वाणी में प्रयोग नहीं किया जा सकता है। प्रेम और प्यार शब्द एक ही भाषा के हैं। ''ल्याओ प्यार करो दीदार''

अक्षर के दो चसमें :–कुछ सुंदरसाथ इस चौपाई **''अक्षर के दोऊ चसमे, नहासी नूर नजर**'' का ऐसा अर्थ निकालते हैं कि जिब्रील और अशराफील तारतम ज्ञान में नहायेंगे। यहां प्रश्न उठता है कि क्या 'नूर नजर' का अर्थ 'तारतम ज्ञान' होता है । वाणी के अनुसार नूर नजर का अर्थ होता है अक्षर के चित्त में अखण्ड हो जाना,

सबों को सुख महंमदे दिए, भिस्त में नूर नजर तले लिए। ब.क. 7/37
इस्क सबों में अतिबड़ा, बका भोम चेतन।
दायम नजर तले नूर के, पेहेचान सबों पूरन।। सिन.29/90
खास गिरो नूजजलाल में लई, नूरजलाल ठौर दूजी को दई।
तीसरी जो सब दुनिया कही, करी नूर नजर तले सही।। ब.क. 2/10
निमख में नूर नजरों, उठे अंग उजास।
बरस्या नूर सबन में, कायम सुख में बास।।69 सनंध प्रं 37
ए कायम नूर नजर की, सिफत या जुबां कही न जाए।
पाक हुए सब खेलहीं, जरा खतरा न पाइए ताए।।70 सनंध प्रं 37
काटे करम सबन के ,काल मार किया दुख दूर।
हिरदे मांहें नूर के, लिए नजर तले हजूर।।कि. 63/२३।।

इस प्रकार स्पष्ट हो जाता है कि नूर नजर में नहाने का तात्पर्य अक्षर के चित्त में यानि भिश्त में अखण्ड मोक्ष प्राप्त करना है। जोश की शक्ति और जागृत बुद्धि को अखण्ड करने, ना करने का प्रश्न ही नहीं होता, वे तो स्वतः अखण्ड की शक्तियां हैं। चश्मा उर्दू में नहर या धारा को कहते हैं। वास्तव में कालमाया और योगमाया ही दो चसमें हैं–

ताथें कालमाया जोगमाया, दोऊ पल में कई उपजत।
नास करे कई पल में, या चित्त थिर कर थापत।।12 क हि प्र 24
नूर लेहेरें दायम उठें, पाउ पल में बिना हिसाब।
कोई लेहेर कायम करे, कई उड़ावे कर ख्वाब।। सनंध 39/39

जैसे ब्रज–कालमाया और रास– योगमाया–,दोनों ही बेहद में अखण्ड हुये हैं। इसी प्रकार जागनी लीला भी दोनों स्थानों पर होगी। अभी कालमाया में चल रही है, फिर योगमाया में ''दूनिया सारी दौड़सी करने को दीदार'' की लीला होगी और न्याय की लीला होगी। ये दोनों लीलायें अक्षर अपने दिल में हमेशा के लिये अखण्ड कर लेगा।

इन सरूप पर खुदाए का प्यार, दोनों जहान का खबरदार।
पाया साहेब थे नेक बखत,दोऊ जहान बुजरकी पावे इत।।ब. क. 12/17

दोनों जहान कालमाया और योगमाया हैं, जिन्हें अखण्ड होने की शोभा मिलेगी। वाणी में जिब्रील के द्वारा तारतम ज्ञान प्राप्त करने का वर्णन कहीं भी

नहीं है। वह राजजी के जोश की एक शक्ति है, और राजजी की इच्छानुसार ब्रह्मलीला सम्पादित करती है। अशराफील और जिब्रील के भिश्त में नूर नजर तले अखण्ड मोक्ष प्राप्त करने का तो सवाल ही नहीं पैदा होता।

यदि हम जिब्रील को कोई स्वरूपवान फरिश्ता मानते हैं तो हमें यह मानना होगा कि यह पंख वाला कोई फरिश्ता है, अक्षरधाम से आगे बढ़ते समय जिसके पंख जलने लगे थे और वह आखिरत के समय अपनी पीठ पर दोनों तरफ 12,000 ब्रह्मात्माओं को तथा मध्य में मुहम्मद की तीन सुरतों (मुहम्मद, देवचंद्रजी, महामतिजी) को बिठाकर परमधाम ले जायेगा जो कि सम्भव नहीं है।

बारें हजार उमत की, रूहें जो इफ्तदाए।
जबराईल के पर पर, दोऊ बाजू बैठाए।।
आप बैठे बीचमें, ले अपनी तीन सूरत।
ला मकान उलंघ के, नूर पार पहुंचत।। खु. 16/ 46, 47
छे हजार बाजू दोए बगल, जबराईल ऊपर रूहन।
अग्यारैं सदी गिरह खोल के, चले महंमद संग मोमिन।। कि. 71/१५

क्या यहां के शरीरों को बिठाकर परमधाम ले जाना है। आत्मा को तो किसी पक्षी के पीठ पर बैठकर जाने की क्या आवश्यकता है। इस प्रकार स्पष्ट होता है कि जिब्रील कोई रूपवान पंखवाला फरिश्ता नहीं है बल्कि मात्र धनी के जोश (आवेश) की एक शक्ति है। जो महंमद की तीनों सूरतों सहित सभी आत्माओं को जगाकर, राजजी के प्रेम में डूबाकर परमधाम ले जायेगी। यहां अंतिम चरण ध्यान देने योग्य है, ''ला मकान उलंघ के, नूर पार पहुंचत।।'' अर्थात् वह अक्षर से भी परे रंगमहल पहुंचेगा।

जुदी हमसे भगवान की, रूह फिरी एक सोए।
जब फिरे सुनसी हमको, तब घरों आवसी रोए।।
जबराईल पिया हुकमें, रूहों करत रखोपा आए।
सोई सूरत है अपनी, पिया हुकमें लेत मिलाये।। संनंध 41/67,71

यहां विचारने की बात है कि यहां लिखा है कि खेल खत्म होने के बाद अक्षर की आत्मा भी हमसे जुदा होगी जबकि वे तो अक्षर धाम में ही हैं और जिब्रील, जिसे हम सत्स्वरूप में बिठा देते हैं, उसके विषय में लिखा है कि वो हमसे जुदा नहीं होगा, धनी से मिल जायेगा। जब मेअराज के समय अक्षर की आतम प्रेम में डूबकर परमधाम जा सकती है तो जोश क्यूं नहीं जा सकता। जबकि जोश तो धनी का ही कहा है। और राजजी और मुहम्मद के बीच आने जाने वाली एक शक्ति मात्र कहा है।

चितवनी के प्रारम्भ में हम कहते हैं कि धनी का जोश हमारी आत्मा को लेकर जा रहा है। ऐसा तो नहीं कहते कि जिब्रील हमें लेकर जा रहा है या जिब्रील का जोश हमें लेकर जा रहा है। यदि महामतिजी/सदगुरू के अंदर जोश के अतिरिक्त एक बड़ी आवेश शक्ति भी अलग से आयी है तो जब सदगुरू हमारे सामने आते हैं तब तो वह आवेश की शक्ति ही हमें लेकर जानी चाहिए ना। जब हम अपना स्वरूप परात्म के जैसा मान रहे हैं तो परात्म के दिव्य किशोर स्वरूप को सदगुरू का वृद्धावस्था का स्वरूप नहीं ले जा सकता। जोश (आवेश) की शक्ति ही हमारी आत्मा को लेकर जायेगी। वास्तव में जोश और आवेश एक ही शक्ति है।

पिता, पुत्र एवं पवित्रात्मा :–इसी जोस की शक्ति को बाईबिल में पवित्र आत्मा कहा गया है। यहां एक बात ध्यान रखने योग्य है, मरियम का गर्भ तो पवित्र आत्मा से ठहरा था, फिर यीशु को परमेश्वर का पुत्र क्यूं कहा गया है? क्यूंकि पवित्र आत्मा/जिब्रील कोई और नहीं बल्कि स्वयं परब्रह्म का जोश (आवेश) है। इसलिये ईसा मसीह ने कहा कि पिता मुझमें है, और मैं पिता में हूं।

"क्या तू प्रतीति नहीं करता कि मैं पिता में हूं और पिता मुझमे है ? ये बातें जो मैं तुमसे कहता हूं, अपनी ओर से नहीं कहता परन्तु पिता मुझमें रहकर अपने काम करता है।" योहन्ना 14/10 ऐसी स्थिति में कहना कि ईसा मसीह जीव सृष्टि में से हैं उनके अंदर जोश भी नहीं आ सकता क्योंकि जोश मात्र ईश्वरी सृष्टि एवं पंचवासनाओं के अंदर आता है। सरासर गलत बात है। बाईबिल में second coming of christ अर्थात् 'ईसा का दुबारा आना' कहा गया है, second christ will come अर्थात् 'दूसरा ईसा का आना' नहीं कहा गया है। same person came again, अर्थात् वही व्यक्ति दुबारा आया है।

ईसा, मुसा, मुहम्मद महदी, विजयाभिनंद एक हैं :–
जोतीष कहे विजयाभिनंद, आये के करसी निकंद।
अंजील कहे ईसा बुजरक, आये के करसी हक।। ब. क. 1/28
जहूद कहे मूसा बड़ा होए, याके हाथ छूटे सब कोए। ब. क. 1/29
यों उरझे सब नाम जुदे धर, रब आलम का आया आखिर।
अपनी अपनी में समझे सब, जुदा ना रहया कोई अब।। ब. क. 1/30

इन चौपाईयों में ईसा, मूसा, महंमद साहब के ही आखिरत में महामति जी के रूप में दुबारा आने का वर्णन है। चाहे लोग बड़ा–छोटा के चक्कर में लड़ते

रहें, पर परमात्मा दो नहीं हो सकता क्योंकि वही शक्ति दुबारा आयी है। महामति जी के समय में भारत में ईसाई धर्म नहीं के बराबर था, इसलिये वाणी में उसकी ज्यादा विवेचना नहीं हो पायी, लेकिन ऐसे बहुत से धर्मग्रंथ अभी भी हैं जिनमें प्रचुर मात्रा में परमधाम, परब्रह्म, एवं ब्रह्मात्माओं का वर्णन है किंतु वाणी में उनकी विस्तृत विवेचना नहीं हो पायी है।

एही अक्षरातीत है एही धनीधाम।
एही महंमद मेहदी ईसा, एही पूरे मनोरथ काम।। बीतक

अर्थात् श्री जी ही ईसा मसीह, महंमद मेंहदी, अक्षरातीत व धाम के धनी हैं।

उसी प्रकार कृष्ण जी के तन में विराजमान राजजी की शक्ति के विषय में भी कहा गया है।

ब्रह्मलीला ढापी हती, अवतारों दरम्यान।
सो फेर आये अपनी, प्रगट करी पेहेचान।।

अर्थात् कृष्ण जी के तन में जो ब्रह्मलीला हुयी थी, वह विष्णु भगवान की लीला के रूप में ढप गयी थी। महामति जी के तन में वे स्वयं आकर अपनी पेहेचान बताते हैं, कि मैं ही ब्रज में एवं रास में आया था।

तो वचन तुमको कहे जाएं, जो तुम धाम की लीला माहें।
बृजवालो पीउ सो एह, वचन आपन को केहेत है जेह।।61 प्र हि 29
रास मिने खेलाए जिने, प्रगट लीला करी है तिने।।
धनी धाम के केहेलाए, ए जो साथ को बुलावन आये।।62 प्र हि 29

मुहम्मद की तीनों सूरतें :–इसी प्रकार मुहम्मद की तीन सूरतें का अर्थ ये नहीं होता कि एक नाम के तीन शख्सियत हैं बल्कि एक ही व्यक्ति का तीन बार दुनिया में आना होता है। मुहम्मद की तीन सूरतें कहा है, तीन मुहम्मद नहीं कहा है।

इन उमत भाईयों वास्ते, महंमद आये तीन बेर।
दुनी क्या जाने बिना निसबत, बिना इलम रात अंधेर।।मा.सा. 16/35
रसूल कहे फुरमान में, मेरी तीनों एक सूरत।
सो पोहोंची नजीक हक के, और कोई न पोहोंच्या तित।।खिल.14/72
ए तीनों सूरत हैं एक, सो रसूल तीनों सरूप विसेक।
सब नामों बुजरकी लिखी जित,मगज खुलें सब देखोगे तित।।ब. क. 12/2
अल्लफ कह्या महंमद को, रूहअल्ला ईसा लाम।
मीम मेंहेदी पाक से, ए तीनों एक कहे अल्ला कलाम।।खु. 14/22

वाणी कह रही है कि अव्वल बीच व आखिर में आने वाली मेरी तीनों सूरतें एक ही हैं, शरीर भले तीन हैं, लेकिन स्वरूप एक ही है, । अव्वल, बीच व

आखिर सब अवसर पर मुहम्मद ही हैं।

सब बखतों कहे रसूल, अव्वल बीच आखर।
कही कजा रसूल जुबांए, करे सांच सबों पैगम्बर।।26 मा सा 6
खेल रसूल हुकमें हुआ, बीच ल्याए रसूल फुरमान।
आखिर भी रसूल आए के, भिस्त दई सब जहान।। स. 25/44

अर्थात् यह संसार रूपी खेल रसूल (राजजी) के हुकम से हुआ, अरब में भी रसूल (मुस्तफा) ही कुर्आन ल्याये, आखिर में भी रसूल (महामति जी) ही सबको ब्रह्मज्ञान के द्वारा मोक्ष प्रदान कर रहे हैं।

ज्यों बसरी मलकी हकी, त्यों रसूल रूहअल्ला इमाम पाकी।। ब.क.8/45
न पावें ऊपर माएने जाहेरी, ए मगजों सों इसारत करी।
एक सरूप अवस्था तीन, ज्यों लड़का ज्वान बुढ़ापन कीन।। ब.क.8/46
ए बात ए पैदास कही, सो सिफत सब महंमद पर भई।
ए तीनों सिफतों भया रसूल, ए सजीवन मोती कह्या अमोल।।ब.क.8/54

एक ही स्वरूप मुहम्मद की ज्ञान व शक्ति से बढ़ती अवस्था कही गयी है। पहले वही स्वरूप आकर संकेतों में अपने घर व आखिरत की बातें कह कर गया, अब पुनः वही स्वरूप उन अपने ही संकेतों को खोलकर हकीकत व मारफत की राह प्रशस्त कर रहा है। इसे ही वाणी में जीवन प्रदान करने वाला अनमोल मोती कहा गया है।

अव्वल आखिर कयामत लग, कह्या नूर चढ़ता नबी का।
खाली न जमाना महंमद बिना,ए बीच मुसाफ हदीस लिख्या।।47 छो. क. 2
तो अव्वल आखिर महंमद, महंमद सब अवसर।
सब नूर इनका कह्या, कोई बखत ना इन बिगर।।मा. सा. 5/22

यह कुर्आन पाक और हदीसों में लिखा है कि शुरू से आखिर तक नबी मुहम्मद साहब का नूर यानि शक्ति, लीला का प्रताप बढ़ता जायेगा। अव्वल, बीच, आखिर कोई भी जमाना मुहम्मद साहब के बिना नहीं होगा।

ताथें गुझ नबी ना राखहीं, पर सुनने वाला ना कोए।
तिन बखत ना रूहें बका की,तो गुझ अर्स जाहेर क्यों होए।।सनंध24/63
जो हुकम हुआ जाहेर का, सो जाहेर किए मैं तब।
बाकी रखे जो हुकमें, जो हुकमें जाहेर करों अब।। खि. 14/76

अर्थात् मुहम्मद साहब कह रहे हैं, पहले जितना जाहिर करने का हुक्म था, उतना मैंने जाहिर किया, और बाकि अब हुकम से जाहिर कर रहा हूं। मैंने ही जो कार्य आधा छोड़ा था, उसे मैंने ही आकर पूरा किया।

किसी अन्य व्यक्ति का आदेश नहीं है बल्कि राजजी के ही दिल में लिये अनुसार उनका जोश (आवेश) राजजी के रूप में काम करता है। राजजी के

अपने ही दिल में लिये अनुसार सब हुआ है।

रूहों को खेल दिखाईयां, विध विध हुकम कर।
आप बांध्या हुकम का, होए रसुल आया आखिर।।
बांधे आप हुकम के, काजी हुए इत आए।
कौल किया मोमिनों सों, सो पाल्या खेल दिखाए।। सनंध 38/48–49

चाहे ब्रज रासलीला के कृष्ण जी हों चाहे अरब में मुहम्मद साहब, चाहे देवचंद्र जी या महामतिजी। सभी आवेश (जोश) स्वरूप, मूल स्वरूप के ही आधीन होते हैं।

"फेर मूल स्वरूपे देख्या तित, ऐ दोऊ मगन होए खेलत।
जब जोश लियो खैंचकर, तब चित्त चौंक भई अक्षर।।"
"तब धाम धनिये कियो विचार, ऐ दोऊ मगन होए खेले नर नार।
मूल वचन की नाहीं सुध, ए दोऊ खेले सुपने की बुध।।"

इस प्रकार वाणी में बहुत सी चौपाईयां हैं जिससे स्पष्ट होता है कि आखिर में भी मुहम्मद साहब ही आकर प्राणनाथ जी के स्वरूप में लीला कर रहे हैं।

जब रसूल आवें फेर कर, खोलसी द्वार हकीकत।
खतम है याही पर, होवे तबहीं अदालत।। मा.सा.6/25
सब सय सिर महंमद की, आखिर कही हिदायत।
और छोटा बड़ा जो कोई, कही महंमद इमामत।। मा.सा.6/29

अर्थात् मुहम्मद साहब ही इमामत करेंगे और हक अर्श की तरफ सिजदा करावेंगे।

पेहेले कबर से मैं उठूं, मेरे भाईयों के खातिर।
ज्यों काम करता हों अव्वल, त्यों करोंगा उठ आखिर।। 31 मा सा 6
मैं नजूम कह्या भाईयों वास्ते, पीछे कूच किया दुनी से।
सोई भाईयों आगे नजूम, आए खोलों मेरा मैं।।32 मा सा 6
मैं आऊंगा यारों वास्ते, खोलों नजूम मेरा मैं।
मेरे कूच नजूमी कोई ना रह्या, मेरा नजूम खुले मुझसे।।81 मा सा 17

अक्षर की आत्मा तो दृष्टा होती है, वास्तव में राजजी का जोश (आवेश) ही महंमद के रूप में कह रहा है कि मैंने अरब में जितना हुकम था उतना जाहिर किया, अब बाकि जाहिर कर रहा हूं।

इस्लामी ग्रंथों में परमधाम व परब्रह्म का स्वरूप :–ऐसा नहीं है कि मुहम्मद साहब ने कुर्आन में कुछ भी वर्णन नहीं किया है, उन्होंने कुर्आन हदीसों आदि में परमधाम का काफी कुछ वर्णन किया भी है।

जमुना जरी किनार पर, कई द्योहरियां तलाब।
भांत भांत रंग झलकत, यों कई जवेर जड़ाव।। सनंध 41/6
नीर उजले खीर से, खुसबोए जिमी रेतसेत।
पसु कई विध खेलहीं, यों कागद निसानी देत।। सनंध 41/7

अर्थात् यमूनाजी का किनारा रत्नजड़ित है, हौजकौसर तालाब के चारों ओर अनेक रंगों के नंगों से युक्त कई देहूरियां हैं। पानी दूध से भी उज्जवल है, धरती मोती के समान जगमगा रही है। वहां कई प्रकार के सुंदर पशुपक्षी खेल रहे हैं, यह सारा प्रमाण कुर्आन पाक में लिखा है।

परमधाम के वर्णन के साथ ही खुदा की अमरद सूरत, श्यामाजी और सखियों का भी सांकेतिक रूप से (मोतियों के रूप में) वर्णन किया है।

हुआ मेयराज महंमद पर, तिन में बका सब बात।
महंमद पोहोंच्या हजूर, तहां देखी हक जात।। 3 छो. क. 2
देखे मोती पूर नूर से, कह्या मुंह पर कुलफ तिन।
इन कुलफ को खोलेगा, तेरा दिल रोसन।।4 छो. क. 2
देखी अमरद जुल्फें हक की, और बोहोत करी मजकूर।
कही बातें जाहेर बातून, पोहोंच के हक हजूर।। सागर 5/6
अर्स बका हौज जोए, पानी बाग जिमी जानवर।
और देखी अरवाहे अर्स की, कहे मैं हक का पैगम्बर।।खुलासा7/6
तो कह्या रसूल ने, अर्स में वाहेदत।
सो कह्या इन माएनो, ए रूहें एक दिल एक चित्त।। सागर 4/18
सबज बन कई रंग के, जवेर कई झलकत।
सैयां बरनन इसारतें, कई पंखी मिने घूमत।। सनंध 41/8
जो कही महंमद ने, हक जात सूरत।
सोई कही रूहअल्ला ने, यामें जरा न तफावत।। सिन.3/31
हक सूरत सलूकी क्यों कहूं, महंमदें कही अमरद।
किसोर कही मसीय ने, सोभा कही न जाए माहें हद।।सिन.20/50

अर्थात् मुहम्मद साहिब ने श्री राज श्यामा जी तथा ब्रह्मसृष्टियों की जैसी शोभा बतायी है, वैसी ही शोभा सद्गुरू धनी श्री देवचन्द्र जी (श्यामा जी) ने कही है।

साथ ही मुहम्मद साहब ने सुंदरसाथ मोमिनों के लिये अनेक सिखापन भी कुर्आन पाक में दिये हैं जिसमें संसार की नश्वरता को समझाते हुए एक मात्र

खुदा तआला परब्रह्म प्रियतम से मुहब्बत करने के लिये प्रेरित किया गया है।

महंमद सिखापन ए दई, जो उतरीं अरवाहें सिरदार।
हक बका सिर लीजियो, छोड़ो दुनियां कर मुरदार।।सिन.23/44
कहे कुरान दूजा कछुए नहीं, एक हक न्यामत वाहेदत।
और हराम सब जानियो , जो कछू दुनी लज्जत।।सिन. 23/49

कुर्आन पाक में मुहम्मद साहब ने ब्रह्मात्माओं के लिये ही संकेतों में सारा वर्णन किया है। उसे ब्रह्मात्माऐं ही सहीं माएने में समझ सकती हैं।

लिखे आयतों हदीसों, हक के सुकन।
समझेगी सोई रूह, जाके असल अर्स में तन।। मा. सा. 2/8
कई साखें बीच कागदों, मुझ पर आया फुरमान।
इनमें इसारतें रमूजें, सो मैं ही पाऊं पेहेचान।। खि. 1/25
मेरे धनी की इसारतें, कोई और ना सके खोल।
सो भी आतम ने यों जानिया, ए जो स्यामाजी कहे थे बोल।। खि. 1/26
मैं किन पर भेजों इसारतें, पढ़ी जाएं न रमूजें किन।
तुम जानत हो कोई दूसरा, है बिना अर्स रूहन।।सिन. 29/26
फुरमाया कहूं फुरमान का, और हदीसे महंमद।
मोमिन होसी सो चीन्हसी, असल अर्स सब्द।।खुलासा6/1

इस चौपाई में ''**मेरे धनी की इसारतें**'' ''**असल अर्स सब्द**''से स्पष्ट है कि कुर्आन पाक में इसारतें स्वयं राजजी ने ही कहा है, तभी तो वाणी में इसे कलाम अल्ला कहा गया है। पहले हकीकत व मारफत का ज्ञान संकेतों में कहा अब उसका स्वयं ही खुलासा कर रहे। और उसका विस्तार से वर्णन भी कर रहे।

महंमद पोहोंचे अर्स में, देखी हक सूरत।
हौज जोए बाग जानवर, कही सब हक मारफत।। सागर 5/5
इलम नुकते की साहेदी, हक सूरत अर्स मारफत।
सो सब बातें फुरमान में, खोले हकी सूरत हकीकत।।सिन. 26/18
विध सारी यामें लिखी, जाथें न रहे अग्यान।
माएने ऊपर के लेय के, कर बैठे अपना कुरान।। खु. 14/2
कबूल करी हम हांसी को, और अपनी मानी भूल।
सब सुध पाई कुंजी से, और फुरमान रसूल।। सिन.23/12
नबी नबुवत कुरान माजजा, ए दोऊ साबित होवें इनसे।
कुरान न खुले बिना खिताब, ना तो लिख्या सब इनमें।। सिन26/20
फुरमान आया जिन पर, ए सोई जानें इसारत।
ले मारफत बैठे अर्स में, बीच बका खिलवत।। सिन.24/6

लिख्या सब कुरान में, माएने मगज सब्द।
क्या समझे अव्वल कतार जो, दुनी बांधी जाए माहे हद।।छो.क.2/43

समझने वालों के लिये अन्य धर्मग्रंथों में भी सारी बातें लिखी ही हैं किंतु दुनिया वाले उन्हें ना समझ पाये इसका दो मुख्य कारण है– एक तो हकीकत मारिफत के रहस्यों को खोलने की शोभा/खिताब तो महामति जी के लिये ही थी। दूसरा ज्ञान होने के बावजूद, जाग्रत बुद्धि ना होने से वे धर्मग्रंथों की बातों को नहीं समझ पाये।

जिन जानों शास्त्रों में कुछ नहीं, है शास्त्रों में सब कुछ।
पर जीव सृष्ट क्यों पावहीं, जिनकी अकल है तुछ।।
प्रेम ब्रह्म दोऊ एक हैं, सो दोऊ दुनी में नाहें।
पढ़े दोऊ बतावें दुनी में, जो समझत ना सास्त्रों माहें।।परि. 39/10

साहेदी तो मात्र कहने की बात है, जो पहले आ जाता है वह बाद के लिये साहेदी का ही रूप हो जाता है। वाणी में तो देवचंद्र जी को भी साहेदी देने वाला कहा है।

बसरी मलकी और हकी, जो कही महंमद तीन सूरत।
दो देवे हक की साहेदी, फरदा रोज कयामत।।१६।। मा सा 26
"सो लई रूहअल्ला साहेदी, दूजी साहेदी आप दई।
त्यों करी इमामें जाहिर, ज्यों सबमें रोशन भई।। सिन 29/51"
बसरी मलकी और हकी, तीन सूरत महंमद की जे।
ए तीनों सूरत दे साहेदी, आखिर अर्स देखावें ए।। सिन.24/10
ए बात मैं दिल में लई, तब महंमद हुए मेहेरबान।
हकीकत मारफत के, पट खोल दिए फुरमान।।खु. 17/43
रूहअल्ला की मेहेर से, उपज्यो एह इलम ।
और महंमद की मेहेर थें, सुध कहूं माया ब्रह्म।।किरंतन 65/9

वाणी एवं कुर्आन पाक में ऐसा लिखा है कि **साहेदी देवे जो खुदाए की, सोई खुदा जान। खिल.12/33 अर्थात्** खुदा की साहेदी खुदा ही देता है।

यदि मुहम्मद साहब को रसूल कहा गया है तो महामति जी को भी तो इमाम महदी यानि धर्म सुधारक कहा गया है। इसलिये शब्दो के जाल में ना फंसें, ज्ञान की वास्तविकता पर ध्यान दें।

बका सूरत पर बंदगी, करी इमामे इमामत।
दोऊ अर्स बताए दोऊ गिरोह को, करी महंमद सिफायत।।सनंध 37/56
इत इमाम करे इमामत, हक बका सूरत देखाए।
करें मोमिनात मोमिन सिजदा, कराए इस्के खुदी उड़ाए।।मा सा. 4/4

अर्स सूरत पर सिजदा, करसी मेहेंदी इमामत।
कदम ग्रहे देखावहीं, जाकी असल हक निसबत।।सिन. 7/49

रसूल मुहम्मद के हाथों संदेश भिजवाने की बात कही गयी है तो श्यामाजी के द्वारा भी कुंजी भिजवाने एवं इमाम महदी को भी भिजवाने की बात आती है।

हुकमें हादी आइया, और हुकमें आए मोमिन।
और फुरमान भेज्या इनपे, हकें कुंजी भेजी बैठ वतन।। सिन.21/4
मैं फुरमान भेज्या है अव्वल, हाथ अमीन रसूल।
इमाम भेज्या रूहों वास्ते, जिन जावें ए भूल।। खिल.13/40

मुहम्मद स.अ.व. की महिमाः–मुहम्मद साहब के अंदर ''जोश था आवेश नहीं'' ऐसा कहना उनकी महिमा को ढांपने का प्रयास है, जो कभी भी वाणी मंथन करने वाले सुंदरसाथ स्वीकार नहीं कर सकते हैं।

नूर पार थें रसूल आवहीं, ए देखो हकीकत।
हक भेजे अपना फुरमान, आगे आलम तो गफलत।। सनंध24/6
आसमान जिमी के लोक को, अर्स बका नहीं खबर।
तो तिनका कासिद महंमद, अर्स से आवे क्यों कर।। सनंध24/11
बेसहूर ऐसी दुनिया, माहें अबलीस आदम नसल।
तो कहे महंमद को कासिद, जो लानत ऊपर अकल।। सनंध24/12
ऐसा हलका कहे रसूल को, सो सुन होत मोहे ताब।
पर दोष देऊं मैं किनको, आगे तो दुनियां ख्वाब।। सनंध24/46
और जो टेढ़ा कहे रसूल को, मैं तिनका निकालूं बल।
पर गुस्सा करूं मैं किन पर, आगे तो सब मृग जल।। सनंध24/47

कुर्आने पाक एवं वाणी में रसूल मुहम्मद की बड़ी महिमा लिखी है, कि जब आखिरत में दुनिया वालों को दोजख में डाल दिया जायेगा, तब मुहम्मद साहब मोमिनों की सिफायत (सिफारिश) करेंगे, उन्हें दोजख से छुड़ावेंगे और सारी दुनिया को अखण्ड मोक्ष प्रदान करेंगे।

ऊपर तले माहें बाहेर, ए उड़ जासी ज्यों गरद।
सो फेर कायम कौन करावहीं, बिना एक महंमद।।सनंध 28/24
सब दुनियां को एही दिया जवाब, महंमद इनको लेसी सवाब।
सब दुनियां जलती महंमद पे आई,दोजख आग रसूलें छुड़ाई।।ब.क.7/36
सबों को सुख महंमदे दिए, भिस्त में नूर नजर तले लिए।ब.क.7/37
दोऊ अर्स बताए दोऊ गिरोह को, करी महंमद सिफायत।। सनंध 37/56

आखिर महंमद छुड़ावसी, और आग न छूटे किन से।
सब जलें आग दोजख की, ए लिख्या जाहेर फुरमान में।। सिन.1/**38**

ये सारी महिमा मुहम्मद साहब के ही तीसरी सूरत महामति जी के लिये है। मुहम्मद साहब जब हकी सूरत के रूप में आयेंगे तब वे सारी दुनिया को अखण्ड मोक्ष प्रदान करेंगे। इसीलिये तो कहा है –

सब बखतों कहे रसूल, अव्वल बीच आखिर।
कही कजा रसूल जुबांए, करे सांच सबो पैगम्बर।। मा.सा.6/26
अर्स बका द्वार न खोलते, तो क्यों होती सिफायत महंमद।
हक के कौल सबे मिले, जो काफर करते थे रद।। सिन.3/15

इस प्रकार मुहम्मद साहब व कुर्आन का विस्तृत स्पष्टीकरण हो जाता है, अब अन्य ग्रंथों के विषय में विवेचना करेंगे।

ईश्वरीय ग्रंथों में एकरूपता– माहेश्वर तंत्र व पुराण संहिता में समाधि में ब्राह्मी अवस्था में प्राप्त ज्ञान के आधार पर शंकर जी ने परमधाम एवं राजश्यामा जी के स्वरूप का भी काफी वर्णन किया है और इश्क रब्द, ब्रज रास जागनी लीला का विस्तृत वर्णन किया है, जिससे स्पष्ट है कि वह वर्णन सबलिक एवं केवल ब्रह्म का नहीं बल्कि परमधाम का ही है। सबलिक केवल में इश्क रब्द सम्भव नहीं है, वहां से आत्माओं का ब्रज रास जागनी के ब्रह्माण्ड में आने की बात कहना भी सम्भव नहीं है। वेदों में भी परब्रह्म के दिव्य स्वरूप एवं परमधाम का काफी संकेत पाया गया है, जो कि ऋषियों ने समाधि अवस्था में प्राप्त ज्ञान के आधार पर कहा है। कबीर जी की ने भी इसी प्रकार समाधि अवस्था में प्राप्त ज्ञान के आधार पर परमधाम व परब्रह्म का संक्षिप्त वर्णन किया है। **''पाण्डे तेरा मेरा कहा एक क्यों होए। मैं कहूं आखां देखी, तू कहे पढ़ा होए।''** राजजी का भाव तो महामति जी में भी नहीं था तभी तो सब जगह लिखा है **''मेहराज कहे''''इंद्रावती कहे'' ''महामत कहे''''साहेब के हुकमें वाणी, गावत है महामत''**

योगेश्वर कृष्ण जी ने भी गीता में जो कहा है 'मामेक शरणं ब्रज'' और ''मैं ही क्षर अक्षर से परे उत्तम पुरूष अक्षरातीत हूं'' वह भी ब्राह्मी अवस्था में अर्थात् लौह अग्निवत अहं ब्रह्मास्मि के भाव से ही कहा है। जिसे सभी विद्वान स्वीकार भी करते हैं। यदि कृष्णजी के अंदर गीता के समय अक्षर का आवेश होता तो वे स्वयं को अक्षर पुरूष कहते ना कि क्षर अक्षर से परे उत्तम पुरूष। किंतु ये भी सत्य है कि पूरी गीता आवेशित नहीं है।

शुकदेव जी के प्रसंग में भी वाणी की चौपाईयों से बिल्कूल स्पष्ट हो जाता है कि जोश और आवेश एक ही है और वही जोश (आवेश) शुकदेव जी के

अंदर विराजमान होकर अखण्ड रास का वर्णन करने जा रहा था।

ऐ लीला सुकें आवेस में कही, राजा परीछीते सही ना गयी।।प्र. हिं. 33/10
या समें प्रश्न कियो राजान, सुक को जोश दियो तिन भान। प्र.हिं. 33/12
त्यारे भागे आवेस कही पंचध्यायी, रास बरनन ना हुआ तिन तांई।।प्र.गु.33/10
तब भागे जोस कही पंचध्यायी, रास बरनन ना हुआ तिन तांई।।प्र.हिं. 33/20

यहां एक ही प्रसंग में समानांतर चौपाई में कभी जोश व कभी आवेश कहा जा रहा है जिससे स्पष्ट है कि जोश व आवेश एक ही हैं। यहां यदि अक्षर का आवेश कहेंगे तो जोश भी अक्षर का कहना होगा क्योंकि समानांतर चौपाई है, परंतु ऐसा सम्भव नहीं है। दूसरी बात अक्षर तो फरामोशी में है, उसका आवेश कैसे आ सकता है। तीसरी बात वाणी में ''अक्षर का आवेश'' ऐसा कोई भी शब्द एक बार भी नहीं आया है।

ए रास लीला का छोड़ के सुख, आधा लुगा न निकसे मुख।
पर ए केहेवाए धनी के जोस, सो उतर गया वचन के रोस।।प्र.हि.33/22

वेद शास्त्र भागवत, कुर्आन, बाईबिल आदि सभी धर्मग्रंथ राजजी के हुकम से ब्रह्मात्माओं के लिये ही आये हैं।

सुकजी आए इन वास्ते, ले किताब भागवत।
ए चरन न आवें ब्रह्मसष्ट बिना, जाकी ब्रह्मसों निसबत।। सिन.7/35
ब्रह्मने भेजी परमहंस पर, वेद अस्तुत बंदोबस्त।
ए ब्रह्म चरन क्यों छोड़हीं, जाकी ब्रह्मसों निसबत।। सिन.7/36
कलाम अल्ला या हदीसें, सास्त्र पुरान या वेद।
ए सब सुख लेवे मोमिन, हक रसना के भेद।।१६।। सिन 16

बाईबिल में भी कहा है– ''हर एक पवित्र शास्त्र परमेश्वर की प्रेरणा से रचा गया है, और उपदेश और समझाने और सुधारने और धर्म की शिक्षा के लिये लाभदायक है।'' 2 तीमुथियस 3/16

वाणी के अनुसार भी सभी पैगम्बरों के अंदर एक ही परमेश्वर की शक्ति जोश (आवेश) थी।

जेते भये पैगम्बर, जिनों पहुंचाया हक पैगाम।
सो पाई जबराईल से बुजरकी, जो पोहोंच्या नूर मुकाम।।
जेता कोई पैगम्बर और, सारी सिफतें याही ठौर।
सतरहें सिपारे यों कर कह्या,बिना महंमद कोई आया न गया।।
ब.क. 5/39

यानि सभी पैगम्बरों की भी शोभा मुहम्मद की है। सृष्टि के प्रारम्भ से मुहम्मद के बिना इस जगत में परमधाम से कोई आया न गया। जिब्रील कोई फरिश्ता ना होकर मात्र राजजी के जोश की शक्ति है, इस शक्ति से अवतरित सभी

धर्मग्रंथ ईश्वरीय ग्रंथ (कलाम अल्ला, अपौरूषेय, परमात्मा की शक्ति से अवतरित) ही कहलाते हैं। उन्हें पढ़ने पर लगता है कि जैसे राजजी की ही वाणी है। (मिलावट का हिस्सा भी स्पष्ट पता चल जाता है।) फर्क सिर्फ इतना है कि भागवत, गीता आदि कुछ ग्रंथों में मात्र थोड़े समय के लिये राजजी ने अपना जोश (आवेश) देकर आंशिक रूप से ज्ञान लिखवाया है, पूरा ग्रंथ आवेशित नहीं है। जबकि कई ग्रंथ पूर्ण रूप से आवेश द्वारा अवतरित भी हैं लेकिन उनमें काफी मिलावट की सम्भावना है। कुर्आन में 60,000 हरूफ होने चाहिये थे लेकिन उसमें 67,000 से ज्यादा हरूफ हैं, जो मिलावट के परिचायक हैं। शुकदेव जी द्वारा कथा करते समय आवेश शक्ति से रास लीला का कुछ वर्णन होने जा रहा था लेकिन राजा परीक्षित के संशय करने से आवेश चला गया और वर्णन नहीं हो पाया। वही शक्ति, जो शुकदेव जी के तन के माध्यम से रास लीला का वर्णन करने जा रही थी, अब महामति जी के तन के माध्यम से उसी रासलीला का वर्णन करती है। सोचिये जरा कि यदि शुकदेव जी के तन से रास लीला का वर्णन हो गया होता तो क्या वाणी से विपरीत कोई दूसरा वर्णन होता? माहेश्वर तंत्रम व पुराण संहिता में जो रास लीला का वर्णन है क्या वह वाणी से कुछ अलग है।यदि एक ही शक्ति से ब्रह्मज्ञान अवतरित हुआ है तो उसमें एक रूपता रहती ही है। वर्णन करने की शैली, भाषा अलग हो सकती है लेकिन वर्णन एक ही होता है। चाहे कोई भी ग्रंथ हो।

मेरी बानी जुदी तो पड़े, जो वतन दूसरा होए।
कहे हादी बल माफक, उरे सिफत सब कोए।। परि 30/13

जोश (आवेश) शक्ति वेद, कुर्आन, बाईबिल आदि ग्रंथों में जो अधूरा काम करके गयी थी, अब महामति जी के तन से वह काम पूरा कर रही है। साथ ही महामति जी के तन में पांचों शक्तियां भी विराजमान हैं। जिससे निजबुध के द्वारा समस्त धर्मग्रंथो के भेद, हकीकत मारिफत के रहस्य स्पष्ट हो रहे हैं।

शब्दातीत का शब्द में वर्णन करने की की समस्या– असमर्थता महामतिजी सहित सभी के साथ रही है।

महामत कहे ए मोमिनों, मैं बोलत बुध माफक।
ख्वाब मन जुबानसों, क्यों कर बरनों हक।। परि. 12/21
बल तो जुबां को है नहीं, ना कछू बुध को बल।
ए जोगवाई झूठे अंग की, क्यों कहे सुख नेहेचल।। परि. 30/129
जो वचन जुबां केहेत है, हिस्सा कोटमा ना पोहोंचत।
पोहोंचे ना जिमी जरे को, तो क्या करे जात सिफत।। सिन.4/4

थोड़े देर के लिये किसी तन में जोश (आवेश) आने से कोई तन प्राणनाथ नहीं हो जाता। **"कहने वाला उठ के गया, मैं जोगी तू राजा**

भया''। कहने वाली शक्ति तन से चली गयी तो तन का नाम ही बचता है। जिस प्रकार धाराभाई और लक्ष्मीदास जी के अंदर भी थोड़े देर के लिये आवेश आया फिर भी वे प्राणनाथ नहीं केहेलाये, छठे दिन की लीला में छत्रशालंजी, लालदास जी आदि सुंदरसाथ को सेवा की आवश्यकता अनुसार आंशिक रूप से आवेश (जोश) प्राप्त होता है ''हिस्सा देऊं आवेश का'' किंतु वे भी प्राणनाथ नहीं कहलाये, उसी प्रकार अन्य महापुरूषों के तन से थोड़े देर के लिये जोश (आवेश) की शक्ति देकर राजजी ने जो भी ज्ञान अवतरित कराया है, उससे वे तन प्राणनाथ नहीं कहला सकते। किंतु वह ज्ञान राजजी के द्वारा अवतरित कहलाता है। राजजी का भाव तो इंद्रावतीजी/महामति जी में भी नहीं था।

साहेब के हुकमें ए बानी, गावत हैं महामत ।कि. 59/८

'प्रगटे ब्रह्म और ब्रह्मसृष्टि और ब्रह्म वतन'' से तात्पर्य उसके ज्ञान–पहचान के जाहिर होने से है। और वाणी का आधार लेकर चिंतन–चितवन करने पर ही परब्रह्म का दीदार हो सकता है। **हक इलम से होत है अर्स बका दीदार''**।

जब देवचंद्र जी, बाल मुकुन्द, बांके बिहारी आदि के भी तन आज प्राणनाथ नहीं कहलाते तो बाकि कैसे प्राणनाथ कहलायेंगे। इन तनों में जितने समय तक राजजी की शक्ति ने लीला किया है, मात्र उतने समय तक की लीलाओं को ब्रह्म की लीला के अंतर्गत माना जाता है, जैसे देवचंद्र जी एवं मिहिरराजजी के तनों में 40 वर्ष के पश्चात् की लीलाओं को राजजी की लीला माना गया है। किंतु 40 वर्ष के पश्चात् भी उस तन से होने वाले सारे कार्य राजजी के नहीं कहलाते हैं, क्योंकि कई कार्य जीव के भी साथ में होते रहते हैं। कृष्ण जी के तन में 11 वर्ष 52 दिन तक भी एक साथ तीन तीन शक्तियों की लीला चलती रही है, नंद–यशोदा, ग्वाल–बालों के साथ विष्णु का जीव लीला कर रहा था, राक्षसों का वध गौलोकी शक्ति से हो रहा था, ब्रह्मात्माओं के साथ राजजी की शक्ति लीला कर रही थी। इसी प्रकार अन्य महापुरूषों के तनों से परमेश्वर की शक्ति से जितने समय तक जो भी ज्ञान अवतरित होता है, वह ज्ञान ईश्वरीय कहलाता है। (यहां ईश्वर शब्द से भाव परमात्मा से है।वेदों में ईश्वर शब्द परमात्मा के लिये प्रयोग हुआ है।)

वाणी तो पढ़ने के लिये होती है, और पूजा तो मानसी होती है। वाणी को वांगमय स्वरूप इसलिये कहते हैं कि इसे पढ़ने से राजजी के स्वरूप की पहचान/दर्शन होता है। **''इन वचनों में अक्षरातीत, धाम धनी साथ सहित।।''''** प्राणनाथ जी ने गुम्मट जी में अपनी गादी में वाणी को इसलिये रखा कि छठे दिन की लीला में वाणी ही हमारे लिये प्राणनाथ जी का स्वरूप, सदगुरू और मार्गदर्शक है, **''प्यारा जिनको मासूक, तिनके प्यारे लगे वचन''** जो सुंदरसाथ

वाणी का मंथन करते हैं उन्हें तो धाम धनी की वाणी प्राण से भी प्रिय होती है। उसी प्रकार यदि मिलावट का हिस्सा निकाल दिया जाये तो राजजी की शक्ति जोश (आवेश) से अवतरित अन्य ज्ञान ग्रंथ भी सुंदरसाथ को उतने ही प्रिय होते हैं।

"अब नबी प्यारा लग्या, और लगे प्यारे शब्द रसूल। सनध27/2"

वास्तव में तन कभी प्राणनाथ नहीं होता है। लोहा हो या पानी, उसमें जब तक अग्नि का आवेश (जोश) आ रहा है तभी तक वो गर्म रहेगा। 'श्री प्राणनाथ निजमूलपति' का भाव मूल स्वरूप राजजी से है ना कि महामति जी के तन से। यदि शुकदेव निजमूलपति, कबीर निजमूलपति, शिवजी निजमूलपति नहीं कहा गया तो क्या मिहिरराज निजमूलपति, देवचंद्र निजमूलपति, कृष्ण निजमूलपति, मुहम्मद निजमूलपति कहा गया है ? या धाराभाई निजमूलपति, लक्ष्मीदास निजमूलपति या छत्रशाल निजमूलपति कहा गया है? वास्तव में मूल स्वरूप राजजी ही रूहों के प्राणनाथ हैं।

जिन देख्या मेरे वजूद को, सो रहा बीच नासूत।
जिन चिन्हा मेरी रूह को, सो पहुंचा बीच लाहूत।।

महामति जी के तन में अभी वर्तमान में आवेश (जोश) सहित पांचों शक्तियां विराजमान हैं जो इससे पहले कहीं नहीं थी, और सब ग्रंथों में इनके विषय में भविष्यवाणी लिखी थी इसलिये वे प्राणनाथ के रूप में प्रसिद्ध हैं। यह खिताब की बात है।

हुकमें आवे लदुन्नी, हुकमें आवे किताब।
सोई खोले हक हुकमें, जिन सिर दिया खिताब।। सनंध 38/42

खसम ना होवे दोएः—बड़ा छोटा का प्रश्न तो तब होता है जब कि स्वरूप दूसरा हो।

हिंदू कहे धनी आवसी, वेदों लिख्या आगम।
कह्या हमारा होएसी, साहेब आगे हम।।80
मुसलमान कहे आवसी, सो हमारा खसम।
लिख्या है कतेब में, आगे नबी हमारा हम।। 81
ईसा अल्ला आवसी, कहे किताब फिरंगान।
किल्ली भिश्त जो याही पे, खोल देसी नसरान।।82
यों लड़के लोक जुदे हुए, पर खसम ना होवे दोए।
रब आलम का ना टरे , जो सिर पटके कोए।। खु. 13/83

जिस प्रकार हिन्दू धर्मग्रंथों में बुधनिष्कलंक स्वरूप के द्वारा जगत को मुक्ति

मिलने की बात कही गयी है, उसी प्रकार यहूदियों में मान्यता है कि मूसा पैगम्बर दुबारा आयेंगे तो उन्हें मुक्ति प्रदान करेंगे। उसी प्रकार कुर्आन में मुहम्मद साहब के द्वारा सिफारिश के द्वारा मोमिनों को दोजख से मुक्ति मिलने के बात लिखी है, उसी प्रकार बाईबिल में ईसा मसीह के दुबारा आगमन होने पर उनके द्वारा जगत को मुक्ति मिलने की बात कही गयी है।

''यीशु ने उससे कहा ''मार्ग और सच्चाई और जीवन मैं ही हूं बिना मेरे द्वारा कोई पिता के पास नहीं पहुंच सकता।'' जॉन 14/6 न्यू टेस्टामेंट

ये सारी भविष्यवाणी एक ही परब्रह्म अक्षरातीत, अल्लाह तआला, सुप्रीम ट्रूथ गॉड के लिये है क्योंकि ईसा, मूसा, मुहम्मद, कष्ण आदि तनों में भी तो उन्हीं की शक्ति थी।

वही व्यक्ति (same person came, second coming) होने से महामति जी ही दुबारा आये ईसा मसीह सिद्ध होते हैं जिनके हाथ में मुक्ति का अधिकार है। इसी तरह ये बात मूसा, मुहम्मद आदि के लिये भी मानी जायेगी। महामति जी मुसलमानों के लिये मुहम्मद, ईसाईयों के लिये ईसा, यहूदियों के लिये मूसा आदि हैं।

जिन जैसा चिन्हा महम्मद को, तासों मिले तिन विध।
मन चाह्या सरूप होए के, कारज किए सब सिध।।

इसीलिये ब्रह्मात्माओं की जमात को मूसा का इकहत्तरवा फिरका, ईसा का बहत्तरवां फिरका, मुहम्मद का तिहत्तरवा फिरका कहा गया है, जबकि मूसा, ईसा, मुहम्मद के समय में तो आत्माऐं इस जगत में आयी नहीं थीं। क्योंकि महामति जी ही सेकण्ड कमिंग ऑफ मूसा/ईसा/मुहम्मद आदि हैं।

फिरके बनी असराईल, हुए पीछे मूसा महत्तर।
एक नाजी नारी सत्तर, कहे फुरमान यों कर।। सिनगार 24/2
याही भांत ईसा के, फिरके बहत्तर कहे।
एक नाजी तिन में हुआ, और नारी इकहत्तर भए।। सिनगार 24/3
तेहत्तर फिरके कहे महंमद के, बहत्तर नारी एक नाजी।
नारी जलसी आग में, नाजी हिदायत हक की।। सिनगार 24/4

''आवेश मात्र ब्रह्मआत्माओं पर, जोश मात्र ईश्वरी सृष्टि एवं पंचवासनाओं पर, जीवों पर दोनों ही नहीं'' ये सिद्धांत वाणी विपरीत और निराधार है। पहले राजजी का जितना हुकम था उतना ज्ञान अवतरित हुआ, बाकि राजजी के हुकम से अब अवतरित हुआ। आत्मा तो दृष्टा होती है, कार्य तो जीव के तन के माध्यम से ही होता है, जब ब्रज में विष्णु के तन में राजजी का जोश (आवेश) आ सकता है, तो फिर ईसा, मूसा पैगम्बर, गुरू नानकजी आदि के अंदर प्रमाण लिखवाने क्यूं नहीं आ सकता।

कई सुंदरसाथ में संशय हो सकता है कि जोश/जिब्रील को क्या अपना प्रियतम माना जा सकता है। किंतु सवाल तो तब हो जब जिब्रील कोई अलग व्यक्ति हो, वह तो मात्र राजजी की एक शक्ति है, जो इस संसार में राजजी का प्रतिनिधित्व करती है ''नूर जोश अंग का जान''। वाणी में प्रियतम ना तो जोश को लिखा है ना आवेश को। बल्कि मूल स्वरूप अक्षरातीत ही रूहों के प्रियतम/खसम/प्राणनाथ हैं। चाहे जोश कहो या आवेश कहो, प्यार शक्ति से नहीं किया जाता बल्कि शक्तिमान से प्यार किया जाता है, और इस संसार में सर्वशक्तिमान परमेश्वर तो साक्षात् नहीं आ सकता लेकिन उसकी जोश शक्ति ही उसकी भूमिका निभाती है। ब्रज रास लीला में भी जोश स्वरूप से ही हमने प्रेम लीला का आनंद प्राप्त किया था।

अहीरों की कौम में, जित महत्तर नंद कल्याण।
सुख लिया ब्रज वधुयें, औरों न हुई पेहेचान।।
महत्तरों की कौम में, जित हूद कील सिरदार।
जोत रसूल टापू मिने, दिया जबराईलें आहार।। खुलासा 13/5, 6
''जोगमाया में खेल जो खेले, संग जोस धनी के भेले। ''प्र. हि. 37/34

यहां कहा जा रहा है, कि हम योगमाया में राजजी के जोश/जिब्रील के साथ हमने प्रेम लीला किया एवं जिब्रील/जोश ने हमें प्रेम लीला के द्वारा आनंद प्रदान किया। भले ही जोश राजजी के सत्ता का स्वरूप है लेकिन इस नश्वर जगत में आत्माओं के साथ प्रेम भी वही करता है क्योंकि इस संसार में वही राजजी का स्वरूप है। वैसे भी प्रेम, जोश/आवेश से परे एक अलग बात है। जो आत्माओं के पास भी होता है। **''प्रेम नाम दुनिया मिने ब्रह्मसृष्टि ल्याई इत''**

एक जगह वाणी में कहा है कि **''जबराईल अशराफील, भेज दिए दोऊ आमर। निगहबानी कीजियो मेरे खासे बंदो पर।।''** यहां यह प्रश्न उठता है कि राजजी हमें नहीं देख रहे हैं तभी तो उन्हें भेजा होगा ना। तो फिर क्यूं कहा वाणी में कि **''नजर से ना काढ़ी मुझे, अव्वल से आज दिन।'' बाले थे बुढ़ापन लग, मेरे सिर पर खड़े सुभान''** यदि राजजी स्वयं नजर में रखे हैं, सिर पर खड़े हैं तो निगहबानी करने के लिये जिब्रील को भेजने का प्रश्न क्यूं आता है।

ये कुर्आन के अनुसार अलंकारिक वर्णन किया गया है। वास्तव में राजजी का मूल स्वरूप परमधाम से नहीं आ सकता, इसलिए जोश के रूप में वे ही पल पल सबके साथ रहते हैं और सबकी खबर रखते हैं, कृपा करते हैं। वाणी में इसी को दिल अर्श करना भी कहा है।

जोस गिरो मोमिनों पर, हकें भेज्या जबराईल।
रूहें साफ रहें आठों जाम और अबलिश दुनी दिल।।
तो अर्स कह्या दिल मोमिन, पाया अर्स खिताब।
इतहीं गिरो पैगम्बरों, काजी कजा इत किताब।।खु 1/85–87

बड़ी वृत्त में एक जगह लिखा है कि **''वकीली मोमिनों की, करत जबराईल जोर। जहां मोमिन बसत हैं, देत प्रदक्षिणा तिन ठौर''** यहां परिक्रमा पूजा करने के लिये नहीं लगा रहा है बल्कि राजजी के ही जोश की शक्ति मोमिनों की हिफाजत करने के लिये चारों तरफ भ्रमण कर रही है। इसी को कहा जाता है कि **''नजर से ना काढ़ी मुझे, मेरे सिर पर खड़े सुभान''।**

कुछ सुंदरसाथ कहते हैं कि जिब्रील/जोश जमूना जी तक ही मुहम्मद साहब को लेकर जा सका, उसके आगे नहीं जा सका इसलिये उसे राजजी का स्वरूप नहीं माना जा सकता। लेकिन यहां ये भी तो नहीं लिखा है कि उसके आगे आवेश आकर ले गया। लिखा है कि रफ रफ का तख्त यानि इश्क आया और ले गया। क्योंकि आत्म जागृति के लिये इश्क की भी परम आवश्यकता होती है। चाहे अक्षरधाम तक कहो या सत्ता का स्वरूप कहो किंतु वाणी से जोश और आवेश एक ही सिद्ध होता है। वाणी में आत्म जागृति के लिये इश्क और जोश दोनों की आवश्यकता कही गयी है।

अब तो आतम ने ए दृढ़ किया, देह उड़े ना बिना इस्क।
जोस इस्क दोऊ मिले, तब उड़े देह बेसक।।कि. 85/14
कहे हुकम आगे रेहेनीय के, केहेनी कछुए नाहें।
जोस इस्क हक मिलावहीं, सो फैल हाल के माहें।। खिलवत 5/16

यहां इश्क का आवेश शब्द प्रयोग कर दिया जाता है जबकि वाणी में परमधाम की लीलाओं में सर्वत्र 'इश्क का जोश' शब्द ही प्रयुक्त हुआ है, कहीं भी प्रेम का आवेश या इश्क का आवेश शब्द नहीं आया है।

सुकन मेरा मानो नहीं, सबे भरी इस्क के जोस।
सबे बोलें नाचें कूदहीं, हमें कहा करे फरामोस।।३८।। खि. 15
बाघ केसरी खेलहीं, चीते खेलें सियाहगोस।
सब विद्या अपनी साधहीं, सब खेलें इस्क के जोस।।६६।। परि. 34

क्या यहां भी जोश और आवेश के नाम पर इश्क का जोश और इश्क का आवेश कहकर भेद किया जा सकता है? नहीं। यदि यहां इश्क का जोश का अर्थ इश्क का आवेश लेते हैं तो फिर अन्य जगह में सत के जोश का भी अर्थ सत का आवेश लेना होगा। वास्तव में जोश और आवेश एक ही बात है और इस संसार में सत का जोश ही राजजी की भूमिका निभाता है और परमधाम में राजजी का मूल स्वरूप इश्क का है।

इश्क का जोश मात्र एक व्यवहारिक कथन है, जो कि सामान्य रूप से तब कह दिया जाता है जब कोई प्रेम में डूबने लगता है। इसे पांच शक्ति में भी गिना नहीं गया है। ब्रह्मलीला हेतु इस जगत में परब्रह्म की सत्ता का जोश (आवेश) ही आता है।

फरिश्तों का विवरण :–सनंध में जहां पांच फरिश्तों का वर्णन है वहां भी समझने वालों के लिये स्पष्ट रूप से कहा है ''**यामें एक रसूल संग, ए जो जबराईल। सनंध 37/3''** कि जिब्रील महंमद साहब के संग आया। क्योंकि जबराईल का संबंध मात्र ब्रह्मलीला से होता है। अन्य पैगम्बरों के तनों में भी ज्ञान अवतरण के उद्देश्य से ही जिब्रील आया। ब्रह्मलीला दो प्रकार से होती है पहला व्यवहारिक जैसे ब्रज–रास लीला एवं दूसरी लीला ज्ञान अवतरण की। ब्रज रास लीला में मात्र प्रेम की लीला हुयी, अरब में ज्ञान अवतरण की लीला हुयी। लेकिन जागनी लीला में दोनों प्रकार की ब्रह्मलीला होती है। यह मात्र एक जोश की शक्ति है, जिसे अलंकारिक रूप से जिब्रील कह दिया गया है। विचार कीजिये कि इस ब्रह्माण्ड से पहले जिब्रील क्या करता होगा।

वास्तव में कुर्आन पाक में जो फरिश्तों का वर्णन किया गया है, वह हिन्दू ग्रंथों से थोड़ा अलग हटकर है। कुर्आन में पहले तो सारे फरिश्तों को अक्षर/नूरजलाल के नूर से नहीं बल्कि एक खुदा के नूर से ही उत्पन्न कहा गया है, क्योंकि उसमें एक खुदा की ही बात है। दूसरा, क्षर जगत के देवताओं को भी, बेहद एवं परमधाम की शक्तियों के समान नूरी कह दिया है। हिंदू ग्रंथों और वाणी के अनुसार ब्रह्मा, विष्णु और महेश इस नश्वर जगत के प्रधान त्रिदेवा हैं, जो आदिनारायण के संकल्प से उत्पन्न होते हैं जबकि कुर्आन में इन्हें यानि अजाजील, मैकाईल, अजराईल को भी अशराफील व जिब्रील के समान खुदा का नूरी फरिश्ता कह दिया है।

''अब कहूं विध नूरियों''सनंध 37/1

पांच फरिस्ते नूर से, खड़े मिने हुकम। सनंध ३७/२

यहां कुर्आन के अनुसार कहा गया है कि पांचों फरिश्ते खुदा के नूर से उत्पन्न हुये हैं। यदि पांचों फरिश्ते नूर से पैदा हुए है तो ऐसा कैसे सम्भव है कि तीन फरिश्ते 5 तत्व के नश्वर हो गये और दो फरिश्ते अखण्ड के नूरी हो गये। क्षर जगत में तो असंख्यों त्रिदेवा – ब्रह्मा, विष्णु, महेश हैं, क्या वे सारे नूरी हैं।

हिंदू ग्रंथों एवं वाणी के अनुसार विष्णु भगवान सभी जीवों के अंदर जीव रूप से विराजमान हैं, जबकि कुर्आन के अनुसार अजाजील को दज्जाल व शैतान कहा गया है जो कि आदम (आदिनारायण) की औलाद यानि सारी दुनिया

वालों की राह मार रहा है। यदि अजाजील जीव रूप से सबके अंदर विराजमान है तो क्या वह स्वयं की राह मार रहा है।

इनकी औलाद की मारों राह, सबके दिल पर होऊं पातसाह।
आदम अजाजील सें ऐसी भई, आठमें सिपारे में जाहेर कही।।17 ब.क 1
तो दुनिया ताबे दज्जाल के, पातसाह सैतान दिलों पर।
दुनी सिफली अबलीस बिना, एक दम न सके भर।।3/6 मा सा
लानत जो अजाजील की, ले अबलीस बैठा दिल।
सो राह ने लेने देवे बातून, जो जोर करें सब मिल।।9/6 मा सा

इसी प्रकार कुर्आन में लिखा है कि सारे फरिश्तें अशराफील से उत्पन्न हुए हैं। साथ ही अशराफील को संसार का प्रलय करने वाला फरिश्ता भी बताया है।

''यामें एक फरिश्ता, तिनसे उपजे सब।
सरत आखिर असराफील, नूर से आया अब।।''सनंध 37/5
''ए खेल समेत फरिश्ते, आखिर उड़ावे अशराफील।''सनंध 37/21।

जबकि वाणी के अनुसार अशराफील अक्षर की जाग्रत बुद्धि है,

''मेरी संगते ऐसी सुधरी, बुध बड़ी हुई अक्षर''

इसी प्रकार कहा गया है कि जिब्रील एक पंख वाला फरिश्ता है, जो सर्वप्रथम मुहम्मद साहब को मेअराज में ले गया था, बाद में मुहम्मद की तीनों सूरतों और सभी सुंदरसाथ को भी परमधाम ले जाने की जिम्मेदारी उसी की है। जबकि वाणी में इसे सर्वत्र धनी का जोश ही कहा है। एवं सर्वत्र मात्र ब्रह्मलीला में ही शामिल दर्शाया गया है।

बारे हजार उम्मत की, रूहें जो इप्तदाए।
जबराईल की पीठ पर, दोउ बाजू बैठाए।।
आप ले बैठे बीच में, अपनी तीन सूरत।
ला मकान उलंघ के, नूर पार पहुंचत।।

जिस प्रकार पुराणों के अनुसार वाणी में भी 14 लोकों का वर्णन कर दिया गया है, जबकि वेदों में उसका वर्णन नहीं है। उसी प्रकार कुर्आन के अनुसार फरिश्तों का वर्णन वाणी में कर दिया गया है **''ए नूरी तीनों फरिस्ते, इनों की असल एक''**

पहली बात, यहां विष्णु भगवान को नूरी फरिश्ता कहा गया है जो कभी भी सम्भव नहीं है। विष्णु भगवान ना नूरी हैं, ना अक्षर धाम के रहने वाले हैं, ना सत्स्वरूप के रहने वाले हैं, ना अक्षरब्रह्म से प्रगट हुए हैं। आदिनारायण के संकल्प से क्षर जगत में ऐसे असंख्यों ब्रह्मा, विष्णु , महेश उत्पन्न होते हैं। ''ए त्रैगुन हमारे खेलौने'' (यदि कोई कहे कि इनकी परआतम सबलिक में है, तो

भी ये प्रश्न उठता है कि इन तीनों का क्या अलग अलग तन है, वहां इनका क्या स्वरूप एवं लीला है, वहां इसने किस आदम को नहीं पेहचाना और बहकाया)

अजाजील (विष्णु भगवान) को कभी भी , अशराफील (अक्षर की जाग्रत बुद्धि) व जिब्रील (धनी के जोश) के समकक्ष नहीं माना जा सकता। वाणी में स्पष्ट रूप से कहा है।

विष्णु अजाजील फरिश्ता, ब्रह्मा मैकाईल।
जबराईल जोश धनी का, रूद्र तामस अजराईल।। खु.12/45
''बुध जी को अशराफील, विजयाभिनंद इमाम।'खु. 12/54'

ये सारा वर्णन अलंकारिक है।

असल एक होने का तात्पर्य ये नहीं है कि विष्णु, अशराफील व जिब्रील तीनों अक्षर के नूरी फरिश्ते हैं, या तीनों अक्षर धाम में रहते हैं या तीनों अक्षर ब्रह्म से उत्पन्न हुये हैं या तीनों अक्षर के अंग हैं।

बल्कि वाणी के अनुसार इन तीनों का संबंध राजजी की सत्ता की लीला से है। इस संसार के कण कण में जो हुक्म/ब्रह्मसत्ता है, वह राजजी की ही है, **(ए उपनी छे मूलधणी थकी)** जो कुर्आन के अनुसार अजाजील है, जो राजजी के हुकम से कार्य कर रही है। समस्त जीवों के रूप में भी वही है।

कहूं हकीकत फरिस्तों, मोमिनों करो पेहेचान।
तबक चौदे फरिस्ते, तिल जेता ना खाली मकान।। मा.सा.5/34
एक छोटी बड़ी बूंद पानी की, सो भी फरिस्ता सब ल्यावत।
या जड़ों दरखतों फरिस्ते, या पर पेट पांउं चलत।। मा.सा.5/36
सिपारे चौबीसमें मिने, लिखी सूरत अबलीस।
जल थल सबों में ए कह्या, या को पूजें कर जगदीस।।मा.सा.3/2
फरिस्ता चौदे तबकों, फिरवल्या सब पर।
हुकम चलाया अपना, कोई रहया न ताबे बिगर।। सनंध 31/28
अजाजील भूल्या नहीं, पर हुकमें भुलाया ताए ।
ओ तो सिर ले हुकम, खड़ा है एक पाए।।33 सनंध 38
तो पीछा फेरे हुकम, जो कोई दूसरा होए।
हुकम सबों समझावहीं, हुकमें न समझें कोए।।34 सनंध 38

यहां ''जो कोई दूसरा होए'' से स्पष्ट है कि अजाजील भी राजजी के हुकम/ब्रह्मसत्ता का ही स्वरूप है।

उसी प्रकार वाणी में अक्षर की जागृत बुद्धि को भी अशराफील कह दिया गया है, और **राजजी की जागृत बुद्धि यानि निजबुद्धि को भी अशराफील कह दिया जाता है।**

मूल बुध असराफील, ए हमारी मिने हम।।सनंध 41/69
श्री धनी जी को जोश, नूर हुकम बुध मूल वतन।।प्र.हि.
इन समे ऐसा हुआ, सब कारज भये सिद्ध। ६
अपने निजवतन की आई, जाग्रत बुद्ध।। बीतक

इसी कारण अशराफील को भी राजजी का ही अंग कह दिया गया है और परमधाम से आने का वर्णन किया गया है।

और अशराफील आइया, जोश जबराईल आये संग।
सो उतरे अरस अजीम से, खुद खसम के अंग।।बी.42/10

इतना ही नहीं खेल खत्म होने के बाद इसके अक्षर से नहीं बल्कि राजजी से मिलने की बात कही गयी है।

जुदी हमसे भगवान की, रूह फिरी एक सोए।
जब फिरे सुनसी हमको, तब घरों आवसी रोए।।
रूहअल्ला ईसा मसी, नूर नाम तारतम।
मूल बुध असराफील, ए हमारी मिने हम।।
जबराईल पिया हुकमें, रूहों करत रखोपा आए।
सोई सूरत है अपनी, पिया हुकमें लेत मिलाये।। संनंध 41/67–71

यानि यहां कहा जा रहा है कि अक्षर की आत्मा भी हमसे जुदा होगी लेकिन अशराफील और जिब्रील राजजी में ही मिल जायेंगे। क्योंकि वे राजजी की शक्तियां हैं।

ये बात विचारणीय भी है कि अक्षर की जागृत बुद्धि तो ज्ञान प्राप्त करने आयी है। निजबुद्धि के बिना दुनिया अखण्ड मोक्ष कैसे प्राप्त कर सकता है इसलिये अशराफील के द्वारा जो सूर फूंकने की बात आती है उसमें निजबुद्धि का ज्ञान ही मुख्य है।

"**बुध जी धनी हुकम मांहें, फरिस्ता असराफील।**
तिन कान दिए सुनने अग्या को, अब हुकम को नाहीं ढील।।कि. 60/21

उसी प्रकार राजजी की सत्ता का स्वरूप होने से ही जबराईल/जोश को अक्षरधाम तक सीमित कहा जाता है, नहीं तो वाणी में सर्वत्र उसे धनी का जोश ही कहा गया है।

ना न्यारा आसिक मासूक, ए तो एकै किया प्रवान।
तो बीच कह्या क्यूं फरिश्ता, जो जाए आवे दरम्यान।।सनंध 36/58
एक सूरत दो बीच में, ए जो फिरे दरम्यान।
तिनको कहिये फरिस्ता, नूर जोस अंग का जान।।सनंध 36/62

उपरोक्त चौपाईयों से फरिश्तों से संबंधित सारे विरोधाभासों को दूर कर दिया है कि जिब्रील कोई फरिश्ता नहीं बल्कि राजजी के अंग का ही नूरी जोश

है। जरा सोचिये आखिर ये जोश की शक्ति किन दोनों के बीच आती जाती थी, अक्षर ब्रह्म से पूछ कर तो जिब्रील नहीं आता होगा ना, यहां राजजी और मुहम्मद के बीच फरिश्ते के आने जाने की बात कही जा रही है।

मारिफत की दृष्टि से देखा जाये तो एक राजजी के सिवा किसी भी वस्तु का अस्तित्व है ही नहीं। फरिश्ते भी राजजी के ही स्वरूप है। इसलिये वाणी में कहा गया है।

है नूर सब नूरजमाल को, फरिस्ते नूर सिफात।
रूहें नूर बड़ीरूह को, ए सब मिल एक हक जात।।८३।।
दूसरा इत कोई है नहीं, एकै नूरजमाल।
ए सब में हक नूर है, याही कौल फैल हाल।।८४।। परिक्रमा 32

इसी प्रकार कुर्आन के अलंकारिक कथनों के अनुसार कह दिया गया है कि आदम की रूह को ना पहचानने से अजाजील को भिश्त से निकाल दिया गया, मुहम्मद को ना पहचानने से जिब्रील अक्षर धाम से आगे ना जा पाया, और अशराफील रंगमहल चला गया।

ए तीनों फरिस्ते नूर से, हुए पैदा तीनों तालब।
जिन जैसा चिन्हाया मुहम्मद को,तिन तैसा पाया मरातब।।
ना तो अजाजील भी नूर से, दे गुमाने डारया दूर।
एक रहया दरम्यान में, एक माहें आया हजूर।। मा सा 5/53,57
जो रूह अर्स मुहम्द की, तिनको ना सक्या पेहेचान।
तो न आया बड़े नूर में, छोड़या न नूर मकान।।
चल न सके जबराईल, रहया हद जबरूत।
मासूक कहया महंमद को, तो आया बका हाहूत।।मा. सा. 5/17, 18

सवाल ये होता है कि अजाजील ने भिश्त/बेहद मण्डल में किस आदम को नहीं पहचाना, जो उसे कालमाया में आना पड़ा।

जिब्रील और अशराफील को किसने पैदा किया, कहां से पैदा हुए। क्या कोई व्यक्ति हैं या मात्र शक्ति। कुर्आन के आलंकारिक कथनों का अभिप्राय समझना अत्यंत आवश्यक है।

जिब्रील के द्वारा अक्षर की आत्मा को नहीं पहचानने से रंगमहल में जाने, ना जाने का क्या मतलब। अक्षर की आत्मा को पहचान भी ले तो अक्षर धाम तक ही जा पायेगा ना। अशराफील क्या अक्षर की आत्मा को पहचानने के कारण रंगमहल जा पाया।

वास्तव में अजाजील यानि दुनिया के जीवों ने मुहम्मद की तीनों सूरतों को नहीं पेहचाना इसलिये दुनिया वालों को लानत लगी।

आशिक–माशूक की लीला–प्रेम को ना जानने के कारण यानि सत्ता का स्वरूप होने के कारण जिब्रील/जोश यमूनाजी पार नहीं कर सका। और अशराफील तारतम ज्ञान से रंगमहल की प्रेम–आनंद की लीला को जान पाया। जैसा कि चौपाई **(मासूक कहया महंमद को)** में स्पष्ट है कि कुर्आने पाक में खुदा को आशिक कहा है और मुहम्मद को माशूक कहा है, **''अल्ला मुहबा माशूक, खासी खसम दिल। तो नाम धराया रसूले, आशिक अपना असल।।** सनंध1/1'' मुहम्मद की तीनों सूरतों को सामूहिक रूप से श्यामा जी के समान माशूक के रूप में वर्णन कर दिया गया है।

अव्वल आखिर बीच महंमद, इत सब जाने दुनी कलाम।
हके मासूक कह्या महंमद को, सो क्यों समझे दुनी आम।।32 छो. क. 2
बेवरा तीन सूरत का, जुदे हवाले जुदे काम।
एक हुकम जोस एक आतम, पहुंचे एके बखत मुकाम।।17
धनी हजूर पहुंचे तीनों, भई मजकूर तिन से।
सुने हरफ नब्बे हजार के, सब रोसनी इनमें।।18 बीतक 62

अर्थात् यहां तीनों सूरतों के एक साथ एक ही समय में मेअराज में पहुंचने की बात कही जा रही है। मुहम्द साहब को मेअराज में राजजी ने कहा कि **''तेरी उम्मते गुनाह किया'' ''इनकी किल्ली तेरा दिल, खुले कुलफ जब आओ मिल**'' यहां श्यामाजी के रूप में ही मानकर तीनों सूरतों के सामूहिक भाव से मुहम्मद साहब को कहा जा रहा है कि तेरी उम्मत (आत्माओं) ने गुनाह किया है इनकी जागनी आपके दिल रूपी चाबी से होगी।

गुनाह नूरतजल्ला मिनें, पोहोंच्या रूहों का जित।
कह्या गुनाह कुलफ मुंह मोतिन, दिल महंमद कुंजी खोलत।।सिन.27/20

श्यामा जी की फरामोशी खोलने की चाबी अक्षर की आतम कैसे हो सकती है। यहां मोमिनों को ही मोती कहा है। **''कुलफ मुंह मोतिन''**

खासी उम्मत के वास्ते मुहम्मद आये तीन बेर।

इस चौ. से स्पष्ट है कि मलकी मुहम्मद श्यामा जी को उम्मत नहीं कहा गया है बल्कि सखियों को उम्मत कहा गया है, जिनके वास्ते मुहम्मद (माशूक) तीन बार तन धारण करके आये।

इश्क की लीला की पहचान ना होने से अर्थात् सत्ता का स्वरूप होने से जिब्रील रंगमहल नहीं जा पाया था। जबकि तारतम ज्ञान से रंगमहल के अंदर की प्रेम आनंद की लीला का सारा वर्णन होने से अशराफील रंगमहल के अंदर का सारा ज्ञान जान पाया। इसी को कुर्आन में आलंकारिक भाषा में कह दिया गया है कि 'अशराफील फिरवल्या अर्शे अजीम के माहें, जिब्रील जबरूत की हद छोड़ी नाहें।''

इस प्रकार स्पष्ट हो जाता है कि जोश और आवेश दो अलग–अलग शक्तियां नहीं हैं। पांच शक्तियों में से जोश और आवेश को दो शक्तियां कोई भी वाणी चिंतनशील सुंदरसाथ नहीं मान सकता।

इस प्रकार दो शक्तियों जोश और जाग्रत बुद्धि का निर्णय हो जाता है। अब हम करेंगे नूर शब्द का मंथन। वैसे तो नूर शब्द का कई अर्थ होता है, दिव्यता, अक्षर ब्रह्म, तारतम ज्ञान आदि। किंतु यहां वास्तविक अर्थ क्या है यह जानना है तो हमें वाणी में ही खोजना होगा।

पांच शक्तियों का विवरण :– वाणी व बीतक में जगह जगह पांच शक्तियों का वर्णन किया गया है।

जुदी हमसे भगवान की, रूह फिरी एक सोए।
जब फिरे सुनसी हमको, तब घरों आवसी रोए।।
ए जो भिस्त हमों करी, फेर एही भानसी दुख।
बुध असराफील पोहोंचहीं, तब ताए भी देसी सुख।।
रूहअल्ला इसा मसी, नूर नाम तारतम।
मूल बुध असराफील, ए हमारी मिने हम।।
जबराईल पिया हुकमें, रूहों करत रखोपा आए।
सोई सूरत है अपनी, पिया हुकमें लेत मिलाये।। संनंध 41/67–71

यहां पांच शक्तियों का वर्णन किया गया है जिसमें 'नूर नाम तारतम' से नूर शब्द का अर्थ तारतम ज्ञान स्पष्ट हो जाता है। साथ ही ''सोई सूरत है अपनी'' से भी स्पष्टीकरण हो जाता है कि जिब्रील अपनी ही ृयानि राजजी की ही शक्ति है, राजजी में ही जाकर मिल जायेगी **'पिया हुकमे लेत मिलाए**।' विचारने की बात है यहां अक्षर की आत्मा भी हमसे जुदा हो रही है लेकिन जिब्रील–अशराफील जुदा नहीं हो रहे हैं। पांचवी शक्ति के रूप में अक्षर की आत्मा ही कहा गया है। आम तौर पर सत्ता का स्वरूप होने से अक्षर ब्रह्म को हुक्म का स्वरूप माना जाता है। वाणी बीतक में भी कई जगह अक्षर ब्रह्म को हुक्म का स्वरूप कहा गया है।

हुकुम नूर ,खुदाये का, जो है नूर जलाल।
दायम आवे दीदार को, फिरे मुजरा कर नूरजमाल।। बीतक 62/51

इस प्रकार उपरोक्त चौपाईयों के आधार पर पांच शक्तियां इस प्रकार होती हैं। 1. राजजी का जोश 2. श्यामा जी की आत्मा 3. तारतम ज्ञान 4. अक्षर की आत्मा 5. निज बुद्धि। आगे वाणी की और भी चौपाईयों से मंथन करेंगे।

आवे अर्स से हुकम, तिन हुकमें चले हुकम।
फिरे सो मतलब करके, जाये मिले खसम।।

भी तितथें रूह आवहीं, आवे नूर से जोस कूवत।
सो फुरमाया सब करे, पकड़ के सूरत।।
नूर मकान से फरिस्ता आवे, असराफील।
सब उड़ावे सूर बजाये के, पलक न होवे ढील।।
भी इत अर्स अजीम से, मसी कुंजी ल्यावे रोसन।
सो तोड़ कुफर आलम में, साफ करे सबन।।
जब इमाम इत आइया, तब ए सारे संग।
सरूप मेहेंदी याही को, यामें देखोगे कई रंग।। सनंध 29/14–18

उपरोक्त चौपाईयों के अनुसार पांच शक्तियां इस प्रकार होती हैं। 1. हुकम 2. जोश 3. अशराफील 4. श्यामाजी की आत्मा 5. तारतम ज्ञान।

ध्यान देने योग्य बात है कि यहां भी पांच शक्तियों में तारतम ज्ञान को लिया है। यहां भी आवेश को अलग से नहीं लिया गया है। यहां हुकम शब्द का स्पष्टीकरण करना चाहूंगा।

हुकम की व्याख्या :–

हुकमें आवे लदुन्नी, हुकमें आवे किताब।
सोई खोले हक हुकमें, जिन सिर दिया खिताब।।
नफा नुकसान सब हुकमें, हुकमें भिस्त दोजख।
झूठा सांच करे हुकमें, हुकम करे सबों हक।।सनंध 38/42, 43
रूहों को खेल दिखाईयां, विध विध हुकम कर।
आप बांध्या हुकम का, होए रसुल आया आखिर।।
बांधे आप हुकम के, काजी हुए इत आए।
कौल किया मोमिनों सों, सो पाल्या खेल दिखाए।। सनंध 38/46–49

उपरोक्त चौपाईयों से स्पष्ट है कि हुक्म राजजी के दिल की इच्छा मात्र है। हुक्म से ही खेल बना, मोमिन यहां आये। अपने दिल में लिये अनुसार ही महंमद के रूप में आये , अपने दिल में लिये अनुसार ही आखिरत में काजी बनकर आये।

आगे पांच शक्तियों से संबंधित कुछ और चौपाईयों की विवेचना करेंगे

पांच चीजें बका से उतरी, सो तुमारी खातिर।
हुकम आया तुम पर, ले फरिस्तों का लस्गर।।
जबराईल जोस धनी का, करे तुमारी वकालत।
तुमको साफ राखहीं, कहूं पैठ न सके इल्लत।।
असराफील आइयां, अपनी फौज बनाए।
सूर फूंका संसार में, कलाम रब्बानी गाए।।
रूहअल्ला आए तुम पर, तिन पहिने जामें दोए।

रूहों तुमको खेल में से, ढूंढ काढ़े सोए।।
अरस अजीम के सुकन, जिनसों होए सिफायत।
दीदार होए हक का, सो तुम वास्ते ल्याए इत।।62 बीतक 69/58–62

उपरोक्त चौपाईयों के अनुसार भी पांच शक्तियां इस प्रकार होती हैं। 1. हुकम 2. जोश 3. अशराफील 4. श्यामाजी की आत्मा 5. तारतम ज्ञान।

दई वस्तां जोस में, शेख बदल को हुकुम।
कागद लालदास को, मुकुन्ददास तारतम।।
बुध दई भीम को, गोवर्धन को सूरत।
मुकुन्द भीम उदयपुर, हम जात अनूपसहर इत।। बीतक 39/19, 20

यहां दिल्ली में श्री जी के द्वारा अपनी सभी शक्तियां सुंदरसाथ को बांटने का प्रसंग है। यदि श्रीजी के अंदर तारतम की शक्ति नहीं होती तो वे मुकुन्ददास जी को कैसे दे सकते थे। यहां ये बात ध्यान रखने योग्य है कि बाकि सब शक्ति तो दे दिया लेकिन जोश की शक्ति–अपना निज स्वरूप नहीं दिया, जिससे आगे वाणी अवतरण भी होता है।

आगे पांच शक्तियों से संबंधित कुछ और चौपाईयों की विवेचना करेंगे

जागृत बुध आये बिना, जोलों होय न बुध अवतार।
तो लों बका भोम को, पोहोंचे न परवरदिगार।
जो लों अरस अजीम से, आवे न हक हुकुम।
तो लों अरस अजीम में, पोहोंच न सके आतम।
जो लों जोस जबराईल, भेजे न हक सुभान।
तो लों बका ठौर की, कर न सके पेहचान।।
जो लों न लदुन्नी इलम, कुंजी तारतम नूर।
आवे नहीं अरस से, तो लों क्यों कर होवे जहूर।।
जो लों रूह अल्लाह की, उतर न आवे इत।
तोलों मोमिन अरस अजीम में, क्यों कर उठे कियामत।।
ए पांचों जब जमा होवे, बीच गिरो मोमिन।
तब साईत कायम होवहीं, सब दिल होये रोसन।। बड़ी वृत्त 8/10–15

उपरोक्त चौपाईयों के अनुसार भी पांच शक्तियां इस प्रकार होती हैं। 1. जागृत बुध 2. हुकम 3. जोश 4. तारतम ज्ञान 5. श्यामाजी की आत्मा ।

तारतम शक्ति :–पांच शक्ति में तारतम ज्ञान का सभी जगह उल्लेख किया गया है इसलिये तारतम ज्ञान को पांच शक्ति के रूप में मानना ही पड़ेगा। यहां हम अपनी बुद्धि से तर्क नहीं कर सकते हैं। कई सुंदरसाथ मानते हैं कि तारतम ज्ञान स्थूल/जड़ रूप में है इसलिये उसे शक्ति नहीं मान सकते।

वाणी में प्रयुक्त कागज जड़ हो सकता है लेकिन शब्दों में निहित ज्ञान जड़ नहीं होता। वाणी की 14 किताबों को राजजी के चौदह अंग कहा गया है। राजजी के दिल में इल्म का जो छठा सागर है, वही तो तारतम ज्ञान के रूप में समय समय पर प्रगट होता रहा है।

''मूल स्वरूप के चित्त की बातें, तारतम में कई रूप''

''धनी ल्याये धाम से वचन, जिनसे न्यारे ना होए चरन''

''इंद्रावती पिया संगे, उदर फल उतपन्न,

एक निजबुध अवतरी, दूजा नूर तारतम''

उपरोक्त चोपाई में राजजी (जोश) के द्वारा, इंद्रावती के धाम दिल में निजबुध और तारतम ज्ञान दोनों के अवतरण होने की बात कही गयी है। जोश तो अवतरण का माध्यम है, यदि जोश से अवतरित होने के कारण तारतम ज्ञान को अलग शक्ति नहीं मानेंगे तो निजबुद्धि को क्यूं पांच शक्ति में गिना जाता है **(बुध मूल वतन)**। यहां तारतम ज्ञान पैदा होने का नहीं बल्कि अवतरित होने का प्रसंग है।

बुध तारतम जित भेले, तित पेहेले जानो आवेस।

अग्या दया सब पूरन, अंग इंद्रावती प्रवेस।। क. हि. 23/67

अर्थात् जहां जाग्रत बुद्धि और तारतम ज्ञान हो वहां पर राजजी का आवेश (जोश) पहले से ही विराजमान जानिये क्योंकि राजजी के हुक्म के अनुसार आवेश से ही जाग्रत बुद्धि और तारतम ज्ञान का अवतरण होता है।

इन सब प्रमाणों से सिद्ध होता है कि पांच शक्ति में तारतम ज्ञान तो रहेगा ही एवं जोस को ही आवेश के रूप में लिखा गया है। हुकम को हुकम भी लिख सकते हैं, अक्षर की आत्मा भी लिख सकते हैं। हुकम को आवेश शक्ति तो कभी भी नहीं लिख सकते। इस प्रकार पांच शक्ति के विषय में निष्कर्ष निकलता है कि 1. धनी का जोश 2. श्याजामी की आत्मा 3. तारतम ज्ञान 4. हुक्म/अक्षर की आत्मा 5. जाग्रत बुद्धि/निजबुद्धि। मैंने अपना विचार आप सबके सामने रखा है, सभी सुंदरसाथ इसे मानने–ना मानने के लिये स्वतंत्र हैं। समस्त सुंदरसाथ से मात्र इतनी ही प्रार्थना है कि वे वाणी मंथन करें, और किसी निर्णय पर पहुंचें, क्योंकि छठे दिन की लीला में मूल स्वरूप ही हमारे राजजी हैं, और ब्रह्मवाणी ही सदगुरू हैं।

साथ चरनों सो तो आये सही, पर पिछले कारण वाणी कही।

प्रणाम जी

अर्श कह्या दिल मोमिन

प्रणाम सुंदरसाथ जी, आज सुंदरसाथ के बीच में दिल अर्श का विषय बहुत ही जिज्ञासा और चिंतन का विषय बना हुआ है। सुंदरसाथ के बीच में कई तरह के भ्रम और प्रचार–प्रसार में भिन्नताएं दिखायीं देती हैं। कभी सुनने को मिलता है कि राजजी स्वयं आकर मोमिनों के दिल में अर्श बनाकर बैठ गये हैं। कभी कहा जाता है कि सुंदरसाथ के तन में मात्र जोश की लीला होती है, आवेश की नहीं । कभी कहा जाता है कि वे तो पहले से ही बैठे हुए हैं, क्योंकि परात्म के दिल में पूरा परमधाम व राजजी है इसलिये आत्माओं के दिल में भी वह सब प्रतिबिम्ब रूप में शुरू से है, इसलिये दिल में प्रतिबिम्ब को देखो। फिर सेहेरग से नजदीक भी इसी में घटा दिया जाता है। फिर शरीर के दिल अंग में ध्यान करने कह दिया जाता है, और दुनिया वालों के दिल में भी परब्रह्म का वास बताया जाता है।

यहां यह तथ्य विचारणीय है कि क्या राजजी मूल मिलावे से साक्षात् उठकर यहां आ गये हैं। यदि स्वयं राजजी हमारे दिल में हैं तो फिर क्यूं कहा जा रहा है कि आवेश नहीं, मात्र जोश की लीला होती है। यदि प्रतिबिम्ब भी चेतन ही है तो फिर जोश या आवेश की क्या आवश्यकता। आत्मा का दिल शरीर का कौन सा हिस्सा है जहां हम ध्यान करें। क्या शरीर के दिल अंग में ध्यान करने का सिद्धांत वाणी आधारित है, क्या दुनिया वालों के दिल में भी राजजी बसे हुए हैं।

जरा विचार कीजिये सुंदरसाथ जी, वाणी में दिल अर्श मोमिन के जो लक्षण बताये गये हैं क्या वे हमारे अंदर आ गये हैं, क्या हम दुख–विकार आदि द्वंद्वों से परे हो गये हैं :–

हलाल हलाल सब कोई कहे, पूछो हादी सिरदार।
जिन दिल हुआ अर्स हक का, तिन दुनी करी मुरदार।। सनंध 21/42

अर्थात् जिन मोमिनों का दिल अर्श हो जाता है, वे दुनिया के सुखों को मुरदार मानकर दिल से छोड़ देते हैं।

होवे फारग दुनी के सोर से, ए दिल हकीकी निसान।
करें हजूर बातून बंदगी, ए दिल मोमिन अर्स सुभान।। सनंध 23/4

अर्थात् दिल अर्श मोमिन की यही निशानी है कि वह दुनिया के शोर से यानि आशा–तृष्णा, चाहना–चिन्ता से हट कर अपनी सूरता को परमधाम में रखते हुए उसी ध्यान में खोये रहते हैं।

अरवाह आसिक जो अर्स की, ताके हिरदे हक सूरत।
निमख ना न्यारी हो सके, मेहबूब की मूरत।। सिनगार

अर्थात् जो भी परमधाम की आशिक रूहें हैं, उनके हृदय में अपने प्रियतम परब्रह्म की छबि बसी होती है। वह एक क्षण के लिये भी उसे भूलती नहीं है।

जो गिरो भाई कहे महंमद के, ताको इस्कै में गुजरान।
वाको एही फैल एही बंदगी, जो दिल मोमिन अर्स सुभान।।
एही खासलखास गिरो महंमदी, जाकी बंदगी इस्क ईमान।
इनों फैल ऊपर का ना रहे, जो दिल मोमिन अर्स सुभान।।

सनंध 23/34, 35

अर्थात् जिन्हे मुहम्मद साहब ने अपना भाई कहा है, उनका जीवन, पल–पल राजजी के प्रेम में ही बीतता है। वे जरा भी दिखावा नहीं करते।

मोमिन दिल अर्स कह्या, सो अर्स बसे जित हक।
निसबत मेहेर जोस हुकम, और इस्क इलम बेसक।।सागर 9/17
ए बरकत हक अर्स में, तो दिल अर्स कह्या मोमिन।
तो बरनन होए अर्स का, जो यों दिल होए रोसन।। सागर 9/18

वाणी में दिल अर्श मोमिन की जो बात कही गयी है कि जिनका दिल अर्श होता है वहां इश्क, इलम, हुकम, जोस, मेहेर आदि सारी न्यामत होती है, क्या ऐसी स्थिति सभी सुंदरसाथ में दिखायी देती है।

इन सब रहस्यमयी बातों के विरोधाभास को दूर कर एक रूप करने का काम वाणी मंथन के बिना कभी भी सम्भव नहीं है।

वाणी का गहराई से जब मंथन किया जाता है तो सबसे पहले ये बात हमारे सामने आती है कि परमधाम से साक्षात् रूप से यहां कोई भी ना आया है, ना जायेगा।

बका बीच रूहन को, खेल देखावे हक।
आया गया इत कोई नहीं, ए इलम कहे बेसक।। खिलवत 16/84

इस संसार में जब किसी तन में राजजी का पूर्ण आवेश (जोश) विराजमान हो जाता है तो वह तन राजजी की शोभा पाता है, जैसे देवचंद्र जी के तन में श्यामजी के मंदिर में और मिहिरराजजी के तन में हब्शे में विराजमान हुये।

श्री सुंदरबाई स्यामाजी अवतार, पूरन आवेस दियो आधार।।प्र. हि. 5/1
दियो जोस खोले दरबार, देखाया सुन्य के पार के पार। प्र. हि. 37/73
आवेस अंग आपी आधार, देई तारतम उघाड़या बार। प्र. गु. 37/20

लेकिन यह खिताब की बात है, सभी सुंदरसाथ को इस तरह की शोभा प्राप्त नहीं हो सकती है। अन्य सुंदरसाथ के लिये स्थिति कुछ अलग रहती है।

नजर से दिल अर्श :–

मैं छिपोंगा तुमसों, तुमें नजर में ले।
पाओ ना अर्स या मुझे, काहूं तरफ न पाओ ए।।खि.14/5
प्रतिबिंब के जो असल, तिनों हक बैठे खेलावत।
तहां क्यों न होए हक नजर, जो खेल रूहों देखावत।। सिन 21/86

जैसे माता–पिता के नजर के सामने उनका बच्चा खेलता है, जैसे ही बच्चे को कोई तकलीफ होती है, माता–पिता तुरंत सहायता देकर उसकी रक्षा करते हैं, दुख दूर करते हैं, उसी प्रकार सुंदरसाथ के ऊपर पल पल राजजी अपनी अमृत नजर रखे हुए हैं, और आवश्यकता अनुसार (आंशिक रूप से) जोश व जागृत बुद्धि देते रहते हैं। यही प्राथमिक रूप से ब्रह्मात्माओं के साथ पल पल राजजी का होना कहा गया है।

ए सुख सब्दातीत के, क्यों कर आवें जुबान।
बाले थें बुढ़ापन लग, मेरे सिर पर खड़े सुभान।। खिलवत 6/36
नीदें दिए गोते सुध बिना, ए जो सुपन का तन।
तिनको भी हकें न छोड़िया, सिर पर रहे रात दिन।। खिलवत 6/40
जो आसिक अर्स अजीम के , तिन सिर नूरजमाल।
परीछा तिनकी जाहेर , सब्द लगें ज्यों भाल ।।कि.91/8
नजर से न काढ़ी मुझे, अव्वल से आज दिन।
क्यों कहूँ मेहेर मेहेबूब की, जो करत ऊपर मोमिन।। खिलवत 6/38
बात बड़ी है मेहेर की, जित मेहेर तित सब।
निमख ना छोड़ें नजर से, इन ऊपर कहां कहूं अब ।। सागर 15/25

यहां 'सिर पर खड़े' का जाहिरी अर्थ 'राजजी सिर पर खड़े हैं', कदापि नहीं माना जा सकता, बल्कि (आंशिक) जोश के रूप में राजजी पल पल साथ रहते हैं। राजजी महाराज अपनी आत्माओं को शुरू से आखिर तक, अज्ञानावस्था से ज्ञानावस्था व ध्यानावस्था तक नजर में रखे रहते हैं। इन सभी अवस्थाओं के अनुसार हमें जोश, जागृत बुद्धि और इश्क प्राप्त होता रहता है और माया का दुख और राजजी का आनंद भी इसी के अनुसार प्राप्त होता रहता है।

''खसम खड़ा है अंतर, जेती सोहागिन'' का भी यही भाव माना जायेगा। नजर में रखना भी एक बहुत बड़ी न्यामत है, परंतु जब तक सुंदरसाथ ब्रह्मवाणी के मंथन में एवं चितवनी में नहीं डूबता है तब तक अज्ञानता, विकार, दुख आदि बने रहते हैं, पूर्ण निर्विकारिता, पूर्ण आनंद की स्थिति प्राप्त नहीं हो पाती है। अज्ञानता की स्थिति में जिज्ञासा और खोज की भावना के रूप में आंशिक जोश का असर देखा जा सकता है।

पार वतन जो सोहागनी, ताकी नेक कहूं पेहेचान।
जो कदी भूली वतन, तो भी नजर तहां निदान।।

वाणी से दिल अर्श :–जब सुंदरसाथ ब्रह्मवाणी से जुड़ता है, उसे इस संसार की नश्वता और अपने निजघर, निजस्वरूप और आत्मा के प्रियतम की पहचान होती है, तब उसके दिल से संसार की चाहना खत्म हो जाती है और एकमात्र राजजी की तड़प, चाहत पैदा हो जाती है। परमधाम की शोभा व राजजी का स्वरूप ज्ञानरूप से उसके दिल में विराजमान हो जाते हैं।

एक खूबी चाहें साहेब की, और न कछुए चाहें।
उनकी एही बंदगी, जो सांचे आरिफ अरवाहें।। क 108/21

अर्थात् जो ब्रह्मवाणी के जानकार होते हैं, वे कभी भी फानी दुनिया के मान–प्रतिष्ठा, सुख–ऐश्वर्य के आकर्षण में नहीं पड़ते बल्कि वे दुनिया को मुरदार जानकर, और अपनी निसबत व निजस्वरूप को जानकर एक मात्र राजजी के दीदार की ही चाहना रखते हैं। उसी के लिये प्रयास करते रहते हैं।

हक इलम के जो आरिफ, मुख नूरजमाल खूबी चाहें।
चाहें चाहें फेर फेर चाहें, देख देख उड़ावे अरवाहें।। सिन 20/1

अर्थात् ब्रह्मवाणी के जो सच्चे जानकार होते हैं वे हमेशा राजजी की शोभा देखना चाहते हैं, यही उनकी बंदगी का भी रूप हो जाता है।

इसे दूसरे स्तर का दिल अर्श वाणी में कहा गया है।

जिस प्रकार संसारिक प्रसंगों में कहा जाता है कि भगवान अपने प्रेमी भक्तों के दिल में रहते हैं, उसी प्रकार आशिक रूहों के दिल की स्थिति हो जाती है, उनके दिल में मात्र राजजी की चाहत, राजजी का प्यार होता है, दुनिया उनके लिये कैद खाना हो जाता है, पल पल वे राजजी से मिलने के ही ख्यालों में खोये रहते हैं।

अर्स दिल मोमिन तो कह्या, अर्स बका सुध मोमिनों में।
चौदे तबकों गम नहीं, मोमिन आए हक कदमों से।। सिन. 6/19

अर्थात् निजघर व निजस्वरूप का ज्ञान होने से ही मोमिनों का दिल अर्श कहा जाता है।

और जित आया हक इलम, अर्स दिल कह्या सोए।
हक न आवें इस्क बिना, और हक बिना इस्क न होए।। सिन. 24/41

अर्थात् जिनके दिल में राजजी का ज्ञान आ गया उसे अर्स दिल कहा जाता है। राजजी तो इस्क के बिना नहीं आते व राजजी के बिना इस्क भी नहीं आता।

अर्स कहिए दिल तिन का, जित है हक सहूर।
इलम इस्क दोऊ हक के, दोऊ हक रोसनी नूर।। सिन. 24/42

अर्थात् उन्हीं का दिल अर्स कहा जा सकता है जिस दिल में राजजी का चिंतन, इल्म व इस्क हो।

ए तीनों मिल किया जहूर, अव्वल आखिर रोसन।
हक बैठे इन इलम में, तो दिल अर्स हुआ मोमिन।। सिन 26/2

अर्थात् इस ब्रह्मवाणी में अक्षरातीत विराजमान हैं, इस तारतम वाणी को आत्मसात् करने के कारण ही ब्रह्मसष्टियों के दिल को धाम कहा गया है।

तो इन रूहों मोमिनों, दिल अर्स केहेलाया।
जो हक इलम लदुन्नी, मेरे दिल आगूं ही आया।। मा. सा. 2/21

अर्थात् महामति जी के दिल मंदिर में परमधाम का अखण्ड ज्ञान अवतरित हुआ, जिससे सुंदरसाथ को परमधाम एवं राजश्यामाजी के स्वरूप की पहचान हुयी, इस कारण तो मोमिनों का दिल अर्श केहला रहा है।

तो अर्स कह्या दिल मोमिन, जो पकड़या इलम हक।
हक सूरत सुध अर्सों की, रूहों रही न जरा सक।। सिन 27/44

ब्रह्ममुनियों के ह्रदय को इसलिये तो धाम कहा गया है, क्योंकि इन्होंने ब्रह्मवाणी के ज्ञान को ग्रहण कर धाम धनी के स्वरूप की पहचान कर ली है।

तो अर्स हुआ दिल मोमिन, जो जाहेर किया गुझ ए।
हक हादी गुझ मोमिन, कोई और न कादर इनके।। सिन.20/119

अर्थात् परमधाम रंगमहल खिलवत की सारी बातें तारतम वाणी के माध्यम से प्रगट कर देने से ही मोमिनों का दिल अर्श हुआ है।

इलमें अंदर जगाइया, तिन में जरा न सक।
कहे हुई है होसी अर्सों की, रूहें बैठी कदम तले हक।।
इन बातों सक जरा नहीं, तो दिल अर्स कह्या मोमिन।
तो भी टले ना बेहोसी, वास्ते हांसी बीच वतन।। सि. 27/47, 48

अर्थात् ब्रह्ममुनियों को भूत–भविष्य एवं परमधाम की बातों में किसी भी प्रकार का संशय नहीं होता है, इसलिये इनके ह्रदय को धाम कहा जाता है।

तो इन रूहों मोमिनों, दिल अर्स केहेलाया।
जो हक इलम लदुन्नी, मेरे दिल आगूं ही आया।। मा. सा. 2/21

अर्थात् इलमे लदुन्नी के आने से ही 25 पक्ष का ज्ञान होने से ही मोमिनों का दिल अर्स कहलाया है।

जब लिया बातून माएना, खोली रूह नजर।
तब हुआ अरस दिल मोमिनों, जाहेर हुई फजर।।मा.सा.16/76

अर्थात् जब तारतम ज्ञान के प्रकाश में सभी धर्मग्रंथों के बातिनी रहस्यों को

समझ लिया, तब परम सत्य की पहचान हो जाने पर मोमिनों का दिल अर्स हो गया।

जो अर्स बातें सक हमको, तो हकें क्यों कह्या अर्स कलूब।
मोमिन कहे बीच वाहेदत, इन आसिकों हक मेहेबूब।। सिन.22/130

अर्थात् यदि परमधाम के ज्ञान में हमें संशय रहता है तो हमारे दिल को अर्श क्यूं कहा गया है। मोमिन परमधाम के वहदत में हैं, जो कि हक महबूब के आशिक हैं।

तो अर्स हुआ दिल मोमिन, जो जाहेर किया गुझ ए।
हक हादी गुझ मोमिन, कोई और न कादर इनके।।सिन.20/119

अर्थात् परमधाम खिलवत के रहस्यों (शोभा–श्रृंगार) को तारतम ज्ञान के द्वारा जाहिर कर दिया, तभी तो मोमिनों का दिल अर्श हो पाया।

राह पकड़े तौहीद की, धरे महंमद कदमों कदम।
सो जानो दिल मोमिन, जिन दिल अर्स इलम।। खु 1/19

अर्थात् जिस दिल में अर्स का ज्ञान हो उसे ही दिल अर्श मोमिन कह सकते हैं।

सो जरे जरे जाग्रत की, सब बातें होत बेसक।
नींद रेहेत अचरज सों, आए दिल में अर्स मुतलक।।सिन.25/14

अर्थात् तारतम ज्ञान के द्वारा परमधाम के जर्रे जर्रे की बातचीत हो रही है, इस प्रकार दिल में परमधाम (ज्ञान से) बस जाने पर भी नींद क्यूं बनी हुयी है।

इनके अतिरिक्त और भी बहुत सी चौपाईयां हैं, जो विस्तार भय से यहां नहीं लिख रहा हूं। इन सबसे स्पष्ट होता है कि जिनके दिल में राजजी का ज्ञान आ जाता है, उसे दिल अर्स कहते हैं। इसका मतलब ये नहीं कि सारे विद्वानों, ज्ञानियों का दिल अर्श हो गया है। ज्ञान से तात्पर्य शुष्क ज्ञान से नहीं है, बल्कि ज्ञान का लक्षण तो विरह–वैराग्य, प्रेम, समर्पण है।

हक इलम के जो आरिफ, मुख नूरजमाल खूबी चाहें।
चाहें चाहें फेर फेर चाहें, देख देख उड़ावे अरवाहें।। सिन 20/1
एही काम आसिकन का, हक इलम एही काम।
नूरजमाल का जमाल, छोड़ें न आठों जाम।। सिन 20/2
एही हक इलम को लछन, आसिकों एही लछन।
एही इलम इस्क के आरिफ, सोई अर्स रूह मोमिन।। सिन 20/6

अर्थात् जो ब्रह्मवाणी के जानकार होते हैं, वे कभी भी फानी दुनिया के मान–प्रतिष्ठा, सुख–ऐश्वर्य के आकर्षण में नहीं पड़ते बल्कि वे दुनिया को मुरदार जानकर, और अपनी निसबत व निजस्वरूप को जानकर एक मात्र राजजी के दीदार की ही चाहना रखते हैं। उसी के लिये प्रयास करते रहते हैं।

रूहें आइयां अर्स अजीम से, दई नुकते इलमें जगाए।
और उमेदां सब छोड़ाए के, हकें आप में लैयां लगाए।।सिन.20/97

अर्थात् राजजी ने तारतम वाणी के द्वारा ब्रह्मात्माओं को संसारिक आशा–तृष्णा के बंधनों से छुड़ाकर एक मात्र अपने चरणों में उनका चित्त लगा दिया है।

यहां एक बात और ध्यान देने योग्य है कि वाणी में मोमिनों को परमहंस कहा गया है, हंस का स्वभाव होता है कि वे पानी मिले दूध में से दूध ग्रहण कर लेता है और पानी छोड़ देता है। इसलिये वाणी में कहा गया है कि मोमिन इल्मे लदुन्नी को भी आंख मूंदकर नहीं ग्रहण करते।

इलम लदुन्नी भेजिया, सो मोमिन ए परखत।
परख चरन ग्रहें हक के, जाकी असल हक निसबत।। सिनगार 7/42

अर्थात् राजजी ने सुंदरसाथ को जगाने के लिये तारतम ज्ञान भेजा है, उसे सत्य की कसौटी पर परख के सुंदरसाथ एक अक्षरातीत राजजी के चरण कमल ग्रहण करती हैं।

अंध श्रद्धा कभी भी भव से पार करने में समर्थ नहीं हो सकती। ज्ञान की निश्चितता तब मानी जाती है जब सदगुरू के वचन, तारतम वाणी और हमारा दिल तीनों एक ही बात की पुष्टि करें। यानि जो चर्चा हम सुन रहे हों, वह वाणी की चौपाईयों के अनुरूप हो, और हमारा दिल उसकी गवाही दे कि हां यह सत्य है। इसमें भी वाणी मंथन सबसे महत्वपूर्ण है। इसलिये तो वाणी में कहा है।

साथ चरनों सो तो आये सही, पर पिछले कारन वाणी कही।

छठे दिन की लीला में ब्रह्मवाणी ही हमारे लिये सद्गुरू है। इसलिये तो पन्ना जी में श्री प्राणनाथ जी ने अपनी गादी पर किसी ब्रह्ममुनि को ना बिठाकर अपनी वाणी को पधराया।

वाणी को सामान्य रूप से सुंदरसाथ नकारात्मक दृष्टि से देखता हुआ बिना काम की वस्तु और ध्यान में बाधक समझ लेता है जबकि वास्तविकता ये नहीं है। यहां तक कि वाणी–ज्ञान के बिना इस संसार में इश्क या दर्शन भी प्राप्त नहीं हो सकता।

कई सुख कायम इन इलम में, आवें न माहें हिसाब।
हक सुराही बका खिलवत में, ए इलम पिलावे सराब।। सिन29/४७
इन हक का इस्क दुनी मिने, न पाइए लदुन्नी बिन।
बिना इस्क न इलम आवहीं, दोऊ तौले अरस परस बजन।।सा. 13/42
जाको हक इलम पोहोंचिया, तिन हुआ सब दीदार।
अंतर कछुए ना रह्या, वह पोहोंच्या नूर के पार।। छो. क. 1/81
हक इलम से होत हैं, अर्स बका दीदार।

पट खोलत सब वार के, और नूर के पार।।मा. सा. 16/81
ज्यों जाहेर खड़े देखिए, त्यों देखिए इन इलम।
यों लाड़ लज्जत सुख देवहीं, बैठाए अपने तले कदम।।सिन25/17

अर्थात् तारतम ज्ञान से परमधाम एवं श्रीराजश्यामाजी के स्वरूप का साक्षात् अनुभव–दर्शन हो जाता है, यह तारतम वाणी परमधाम के अखण्ड सुखों का रसास्वादन कराती है, राजजी के अखण्ड इश्क रूपी शराब का पान कराती है। इसके बिना संसार में इश्क भी नहीं आ सकता।

मारफत देवे इस्क, इस्कें होए दीदार।
इस्कें मिलिए हकसों, इस्कें खुले पट द्वार।। सिन. 25/86

अर्थात् मारिफत का ज्ञान इश्क देता है, और इश्क से दीदार होता है।

स्वरूप से दिल अर्श :–इस प्रकार वाणी से दिल अर्श होना सिद्ध होता है लेकिन कुर्आन आदि ग्रंथों में भविष्य कथन के रूप में मोमिनों की जो महिमा लिखी है, कि मोमिनों का दिल खुदा का अर्श होता है, उसमें खुदा की सूरत होती है यह भविष्य कथन दिल में राजजी की शोभा बसाये बिना पूरी नहीं मानी जा सकती। इसके बिना आत्म जागृति भी सम्भव नहीं है। राजजी की शोभा को दिल में बसाना ही वास्तविक और सबसे महत्वपूर्ण दिल अर्श है।

ए देखो खुलासा फुरमान का, मोमिन करें विचार।
रूहें हक सूरत दिल में लई, छोड़ी दुनिया कर मुरदार।। खु. 1/2

अर्थात् नश्वर दुनियावी सुखों की चाहना को छोड़कर ब्रह्मात्माओं ने राजजी का स्वरूप अपने दिल में बसाया। ऐसा कुर्आन में लिखा है जिसका सुंदरसाथ विचार करें।

ए देखें दिल अरस मोमिन, अरस हक बिना होए क्यों कर।
एह विचार तो न करें, जो कुलफ कहे दिलों पर।। खुलासा 1/39

अर्थात् अर्श दिल मोमिन ये विचार करें कि राजजी का स्वरूप दिल में आये बिना आखिर दिल अर्श का दावा कैसे किया जा सकता है। क्या राजजी के बिना भी दिल अर्श कहला सकता है ?

दिल अरस मोमिन कह्या, जामें अमरद सूरत।
छिन ना छूटे मोमिन से, मेहबूब की मूरत।।खु 3/31

अर्थात् मोमिनों का दिल अर्स कहा है जिसमें खुदा की अमरद सूरत बसी होती है, एक क्षण के लिये भी वे उसे दिल से अलग नहीं करते, यानि भूलते नहीं।

सुन्दर सलूकी छब सोभित, रंग रस प्यार भरे।
सोई मोमिन अर्स दिल, जित इन हकें कदम धरे।। सा 8/20

अर्थात् जिस दिल में राजजी के नूरी चरणों की शोभा बस जाती है, वही दिल अर्स कहलाता है, और वही रूहें आशिक कहलाती हैं।

जो रूह अर्स की मोमिन, तिन सब की ए निसबत।
दिल मोमिन अर्स इन माएनों, इन दिल में हक सूरत।। सिनगार 3/2

अर्थात् मोमिनों का दिल इस कारण अर्स कहा गया है, क्योंकि उनके दिल में राजजी का स्वरूप बसा होता है। यानि राजजी का स्वरूप जब तक दिल में ना बसे तब तक दिल अर्स नहीं माना जा सकता।

हकें बैठक कही अपनी, दिल मोमिन का जे।
जिन दिल हक आए नहीं, सो दिल मोमिन कहिए क्यों ए।। सिन 6/16

अर्थात् मोमिनों का दिल अर्श कहा है लेकिन जिस दिल में राजजी की शोभा बसी नहीं हैं, उसे अर्स दिल मोमिन कैसे कहा जा सकता है।

ए चरन आवें जिन दिल में, सो दिल अर्स मुतलक।
कई मुतलक बातें अर्स की, दिल सब विध हुआ बेसक।। सिन.22/114

अर्थात् राजजी के नूरी चरणों की शोभा जिस दिल में बस जाये उस दिल को ही राजजी का अर्श माना जाता है। उसके पश्चात् पूर्ण ज्ञान, पूर्ण निर्विकारिता, पूर्ण आनंद की स्थिति आ जाती है।

वस्तर भूखन सब अंगों, कण्ठ श्रवन हाथ पाए।
नख सिख सिनगार साज के, बैठे अर्स दिल में आए।। सिन 4/71

अर्थात् नख से शिख तक पूर्ण श्रृंगार सहित श्री राजजी का पूर्ण स्वरूप मेरे (महामतिजी के) अर्श दिल में आ गया है।

प्यारे पाऊं मेरे पिउ के, देख नख अंगूठे अंगुरियों।
सो बैठे बीच दिल तखत के, तो अर्स कह्या मेरे दिल को।। सिन 5/3

अर्थात् राजजी के नूरी चरणों की शोभा दिल में बस गयी इसलिये तो मेरे (महामतिजी के) दिल को अर्स कहा है।

वस्तर भूखन पेहेर के, मेरे दिल में बैठे आए।
हकें सोई किया अर्स अपना, रूह टूक टूक होए बल जाए।। सिन 23/4

अर्थात् अक्षरातीत श्री राज जी वस्त्रों एवं आभूषणों के श्रृंगार से सुसज्जित होकर मेरे हृदय में आकर विराजमान हो गये हैं। उन्होंने मेरे हृदय को ही अपना धाम बना लिया है। (यही तो है वास्तविक दिल अर्श)

सुन्दरता इन कदम की, सो चुभ रही रूह के दिल।
अरस–परस ऐसी हुई, एक निमख न सके निकल।। सिन 6/50
कई विध के सुख कदम में, मेहेर कर देत मेहेरबान।
तो अर्स कह्या दिल मोमिन, इन पर कहा कहे सुभान।। सिन 6/55

अर्थात् राजजी के नूरी चरणों की शोभा आत्मा के दिल में बस गयी है

इसलिये तो मोमिनों का दिल अर्श कहा है।

दिल के अंगों बिना हक के, इत स्वाद लीजे क्यों कर।
देखे सुने बोले बिना, तो क्या अर्स नाम धरया धनी बिगर।। सा 9/36

अर्थात् यदि अपने दिल में धनी की शोभा को बसाया नहीं, उनका दीदार नहीं किया, उनकी मधुर बातें नहीं सुनी तथा उनसे स्वयं बातें नहीं की, तो क्या धनी के बिना ही अर्श दिल सुंदरसाथ कहला रहे हो, अर्थात् धनी की शोभा बसाये बिना इस दिल को अर्श कहलाने का कोई अधिकार नहीं है ?

इस प्रकार यह स्पष्ट हो जाता है कि ग्रंथों एवं वाणी में जिस दिल अर्स की महिमा वर्णित की गयी है, वह शोभा सुंदरसाथ कहलाने मात्र से प्राप्त नहीं होती।

दिल में प्रतिबिम्ब विवेचनाः–यहां एक और संशयात्मक बात सामने आती है, जिसका वाणी में भी कोई स्पष्ट प्रमाण नहीं है। वह ये कि परात्म के दिल में राजजी हैं, तो उसका प्रतिबिम्ब आत्मा के दिल में भी है। इसलिये दिल में देखो, दिल में ही राजजी व पूरे परमधाम का प्रतिबिम्ब दिखायी देगा। सबसे पहली बात, आत्मा का दिल शरीर का कौन सा हिस्सा है जहां देखने की बात कही जाती है। यदि प्रतिबिम्ब ही देखना है तो वाणी किसलिये आयी है और चितवनी के समय क्षर अक्षर को पार करते हुए वाणी आधारित स्वरूप–श्रृंगार का वर्णन/धारणा क्यूं किया जाता है, बस कह देना चाहिए कि आत्मा के दिल में देखो, जब प्रतिबिम्ब है तो अपने आप दिखना चाहिए ना।

यहां सबसे पहले मैं ये बात कहना चाहूंगा कि परात्म का दिल ही स्वप्न जगत में आत्मा के रूप में आया है।

डुखडा न डिसे आकार, दिलडा डुख पसंन।
से डुख डिसे दिल रांदमें, डुख न बकामें तन।। सिंधी 7/20

अर्थात् दुख शरीर को नहीं होता, दिल को होता है, और दिल हमारा खेल में आकर दुख देख रहा है, भले ही परात्म के तनों को कोई दुख ना हो।

देखत है दिल खेल को, लिए अर्स रूह हुज्जत।
फुरमान आया इनों पर, और इलम आया न्यामत।। सि 24/53

अर्थात् परात्म का दिल ही परात्म का नाम लेकर खेल में आकर संसार देख रहा है, उन्हें जगाने के लिये ही कुर्आन और तारतम ज्ञान आया है।

इस प्रकार जागृत का दिल ही स्वप्न में जाता है, किंतु वह फरामोसी में आ जाता है। परात्म के दिल में राजजी बसे हैं लेकिन स्वप्न में आने के बाद मूल तन की स्मृति नहीं रहती है। जागृत अवस्था में दिल में सब याद रहता है लेकिन फरामोसी में स्मृति काम नहीं करती है। इसलिये तो वाणी में कहा है।

आतम तो फरामोस में, भई आड़ी नींद हुकम।
सो फेर खड़ी तब होवहीं, रूह दिल याद आवे खसम।। सिन 4/17

अर्थात् आत्मा तो फरामोसी में है, जागृत और स्वप्न के बीच में नींद/हुकम का पर्दा है, जब निजघर की याद आयेगी तभी वह जागृत हो सकती है।

जब याद तुमें मैं आंऊगा, तबहीं बैठोगे जाग।
गए आए कहूं नहीं, सब रूहें बैठी अंग लाग।खि.13/37

अर्थात् हम कहीं बाहर नहीं गये हैं, मूल मिलावे में ही राजजी के चरणों में विराजमान हैं, जब निजस्वरूप की स्मृति आ जायेगी तब ही हम जागृत हो जायेंगे।

एही तुमारी भूल है, तुमें बंधन याही बात।
एही फरामोसी तुम को, जो भूल गए हक जात।। खिलवत 15/64

अर्थात् यही हमारी अज्ञानता है, बंधन भी इसी बात का है, यही फरामोसी है कि हम निजस्वरूप को भूल गये।

इस्क हमारा कहां गया, जो दिल बीच था असल।
तिन दिलें सहूर क्यों छोड़िया, जो विरहा न सेहेता एक पल।।सि. 25/11

अर्थात् हम पल पल धाम धनी के साथ प्रेम व आनंद में रहते थे, वह प्रेम हमारे दिल से कहा चला गया, यानि हम निजघर को भूल गये, वैसे ही इश्क भी चला गया।

छूटी रूहों को अर्स की, मूल मेले की लज्जत।
इस्क न आवे क्यों हमको, जाकी नूरजमाल सों निसबत। परि 18/8

अर्थात् हमें परमधाम के प्रेममयी व आनंदमयी लीलाओं की जरा भी याद नहीं रही,। जब याद ही नहीं रही तो इस्क कहां से आयेगा।

जुबां क्या कहे बड़ाई हक की, पर रूहें भूल गई लाड़ लज्जत।
एक दम न जुदे रहे सकें, जो याद आवे हक निसबत।।सिन.11/30

अर्थात् परमधाम के अखण्ड सुखों को ब्रह्मात्माऐं भूल गयीं हैं, नहीं तो वे उसके बिना एक पल भी नहीं रह सकती हैं, यदि उन्हें अपने निसबत की याद आ जाये।

रंग रस यों केहेते हों, ए जो मेहेर करत मेहेरबान।
ए भूल गैयां हम लाड़ सबे, ना तो क्यों रहे खिन बिन प्रान।।सि.19/50

अर्थात् हमें निजस्वरूप व राजजी के प्रेम को भूल गये हैं इसलिये राजजी मेहेर करके अपने स्वरूप का वर्णन करवा रहे हैं, नहीं तो राजजी की यदि जरा भी याद हमारे दिल में आ जाये तो एक क्षण भी हम उनके बिना कैसे रह सकते हैं?

सनेह आए झूठ ना रहे, जो पकड़ बैठे हैं हम।
ए झूठ नजरों तब क्यों रहे, जब याद आवें सनेह खसम।। सिन25/29

अर्थात् निजस्वरूप की जब तक याद नहीं आयेगी तब तक इश्क नहीं आयेगा, और जब तक इश्क नहीं आयेगा तब तक हम जागृत नहीं हो सकेंगे।

निजघर, निजस्वरूप की याद आना जरूरी है, यही लक्ष्य है किंतु निजबुद्धि के वाणी के बिना स्मृति कैसे आ सकती है, कैसे आत्मा बल कर सकती है।

"निज बुध आवे अग्याएं, तोलों ना छूटे मोह।
आतम तो अंधेर में, सो बुध बिना बल ना होय।। क. हि. 1/36"

विस्मृति–फरामोशी की स्थिति में 'दिल में देखो' बोलने से प्रतिबिम्ब किस प्रकार दिख सकेगा?। वाणी के आधार पर परमधाम, राजश्यामाजी व वहां की प्रेममयी लीलाओं का चिंतन व चितवन करने से ही दर्शन भी हो सकता है और स्मृति भी वापस आ सकती है। इसीलिये तो वाणी आयी है।

जोलों इलम को हुकमें, कह्या नहीं समझाए।
तोलों सो रूह आपको, क्यों कर सके जगाए।।
जो लों मुतलक इलम ना आखिरी, तो लों क्या करे खास उमत।
पेहेचान करनी मुतलक, जो गैब हक खिलवत।।सिन.1/48

अर्थात् जब तक राजजी की कृपा से ब्रह्मज्ञान अवतरित नहीं हो जाता। तब तक ब्रह्मात्माएं भी कैसे जागृत हो सकती हैं।

जो अरवा होए अर्सकी, सो कीजो इलम सहूर।
इलम सहूर जो हकें दिया, लीजो इनसे रूहें जहूर।। सिन 11/16

अर्थात् परमधाम की जो भी आत्मा हो, वह वाणी का आधार लेकर चिंतन व चितवन करे। (दिल में देखने और खोजने के कथन की कोई सार्थकता नहीं है)

ऐसी तो कोई ना हुई, बिना इलम होवे हुसियार।
हाँसी बिना कोई ना रही, छोड़ ना सके अंधार।। खि 16/61

अर्थात् ऐसा तो किसी के लिये भी सम्भव नहीं है कि बिना ज्ञान के जागृत हो सके। तारतम ज्ञान की सहायता के बिना कोई भी माया को छोड़कर राजजी के तरफ कदम नहीं बढ़ा सकती।

बेसक इलम को सीख के, ऐसे खेल को पीठ दे।
देखो कौन आवे दौड़ती, आगूं इस्क मेरा ले।। खि 16/85

अर्थात् राजजी कह रहे हैं– वाणी का मंथन करते हुए, माया की चाहना–चिंता, आशा– तृष्णा को छोड़कर परमधाम–राजजी का चिंतन व चितवन करते हुए कौन पहले मेरा इश्क लेकर जागृत होता है।

जब तुम भूले मुझको, तब इस्क गया भुलाये।
अब नये सिरे इस्क, देखो कौन लेय के धाए।। खि 16/86

अर्थात् चूंकि स्मृति ही नहीं रही, तो इश्क भी भुला गया। राजजी कह रहे हैं कि अब देखते हैं कि वाणी की सहायता से चिंतन व चितवन करते हुए यहां नये सिरे से कौन इश्क लेकर आता है।

बेसुमार जो फेर फेर कहिए, तो आवत नहीं हिरदे।
तो सब्द में ल्यावत, ज्यों दिल आवे मोमिनों के।।३।। परि. 34
हिसाब बीच ल्याए बिना, हक आवें नहीं दिल माहें।
हक देत लदुन्नी मेहेर कर, हक अर्स आवे बीच जुबांए।।५।। परि. 34

अर्थात् शब्दातीत परमधाम का वर्णन शब्दों में इसलिये किया है, ताकि सुंदरसाथ इस नश्वर जगत में उसका चिंतन व चितवन कर सकें, उसकी शोभा दिल में बसा सकें, तारतम वाणी में राजजी ने पूरे 25 पक्ष की शोभा, लीला व युगल स्वरूप की शोभा का वर्णन बहुत ही मेहेर करके किया है। (दिल में देखने और खोजने के कथन की कोई सार्थकता नहीं है

अर्स न्यामत जाहेर हुई, जोए कौसर अर्स हौज।
हक इलमें कछु ना छिपे, किया जाहेर फरदा रोज।। मा. सा. 16/73

अर्थात् ब्रह्मज्ञान के द्वारा परमधाम पच्चीस पक्ष का ज्ञान दुनिया में जाहर हो गया है।

ए सुख बिसरे धनीय के, इन सुपन भोममें आए।
सो फेर फेर याद देत हों, जो गया तुमें बिसराए।। परि.4/3

अर्थात् इस स्वप्नमयी जगत में आकर हम अपने निजस्वरूप, निजघर और धाम धनी को भूल गये, उसे महामति जी परिक्रमा, सागर, सिनगार आदि वाणी के द्वारा याद दिला रहे हैं।

कीजे याद मिलाप धनी को, और सखियों के सनेह।
रात दिन रंग प्रेम में, विलास किए हैं जेह।। परि.4/3४।।

अर्थात् हे सुंदरसाथ जी याद कीजिये कि किस प्रकार हम धाम धनी से प्रेमपूर्वक मिलते थे, और हम सखियां आपस में किस प्रकार प्रेम पूर्वक लीलायें करते थे।

एही अपनी जागनी, जो याद आवे निज सुख।
इस्क याही सों आवहीं, याही सों होइए सनमुख।। परि.4/3७।।

अर्थात् अपने निजघर के अखण्ड सुखों की स्मृति ही हमारी असली जागनी है, इसी से हमारे अंदर इश्क भी आयेगा और हम मूल मिलावे में जागृत हो सकेंगे।

वतन आपनो, ब्रह्मसष्ट को देऊं बताए।
धाम की सुध मैं सब देऊं, ज्यों अंतस्करन में आए।। परि.5/1
ठौर खेलन के चित धरो, विध विध के बन माहें।
केहेती हों आगूं तुम, जो हिरदे चढ़ चढ़ आए।। परि.5/15

अर्थात् महामति जी कह रही हैं कि अपने निजधाम, स्वरूप एवं लीलाओं का वर्णन ब्रह्मात्माओं के लिये कर रही हूं ताकि उनके हृदय में वहां के प्रेम आनंद की कुछ बूंद प्राप्त हो सके।

दम न छोड़े मासूक को, मेरी रूह की एह निसबत।
क्यों बातें याद दिए न आवहीं, जो करियां बीच खिलवत।।सिन.23/6

अर्थात् मेरी आत्मा की राजजी से जो निसबत है उस कारण हमें राजजी के बिना एक पल भी रहना नहीं चाहिए, किंतु वे बातें तारतम वाणी के द्वारा याद दिलाने पर भी क्यूं हमें याद नहीं आ रही हैं।

फेर फेर हक अंग देखिए, ज्यों याद आवे निसबत।
है अनुभव तो एक अंग का, जो हमेसा वाहेदत।। सिन.24/66

अर्थात् वाणी का आधार लेकर राजजी के एक एक अंग की शोभा को देखिये ताकि अपने निजस्वरूप एवं निसबत का स्मरण हो।

जब वाणी का आधार लेकर ही परमाधाम की धारणा, ध्यान व चिंतन करना है तो फिर दिल में प्रतिबिम्ब देखने के कथन का क्या औचित्य रहता है? जब हम चितवनी में देख रहे होते हैं तो हमें क्या ये ध्यान रहता है कि हम दिल में देख रहे या दिमाग में देख रहे हैं।

वाणी में मारकण्ड के दृष्टांत से भी यही बात समझायी गयी है कि अपने स्वरूप की विस्मृति के कारण मारकण्ड जी सात कल्पांत एवं छियासी युग तक माया में दुख उठाते रहे।

बेर ना हुई एक अधखिन, किया मायाऐं बिछोहा घन।
मारकण्ड माया द्रष्टांत, मांगी धनी पे करके खांत।।प्र.हि.9/11

जब नारायण भगवान ने माया में प्रवेश करके उन्हें उनके मूल स्वरूप की पहचान करायी तब माया इस प्रकार गायब हो गयी जैसे कभी थी ही नहीं। और वे स्वयं को वहीं ताल के किनारे बैठे पाते हैं।

याद आया सरूप बैठा जाहें, तब उड़ गई माया जानों हती नाहें।
जाग देखे तो सोई ताल, बीच मायाऐं कियो ऐसो हाल।। प्र.हि.9/15

यह माया का स्वभाव ही है, जो ना होते हुए भी सत्य प्रतीत होती है। इसी कारण तो धाम धनी ने तारतम ज्ञान का प्रकाश किया है।

माया की तो एह सनंध, निरमल नेत्रे होइए अंध।
ता कारन कियो प्रकास, तारतम को जो उजास।। प्र.हि.9/16

वाणी में तो कहा है कि जिस प्रकार महंमद साहब नासूत मलकूत जबरूत पार करके अर्से आज़म गये थे उसी रास्ते पर चलकर हमें भी दर्शन हो सकेगा।

रसूलें राह बताई मेयराज में, अर्स लेसी सोई मोमिन।
देखाई चढ़ उतर, जो हकें खिलवत कहे सुकन।। छो. क. 1/28

वाणी में चितवनी के द्वारा राजजी की शोभा को दिल में बसाने के लिये बार बार कहा गया है, ना कि दिल में प्रतिबिम्ब देखने को कहा है।

ए तिलसम क्योंए न छूटहीं, जहां साफ न होवे दिल।
अर्स दिल अपना करके, चलिए रसूल सामिल।।सिन. 25/43

अर्थात् जब तक अपने हृदय को निर्मल करके उसमें राजजी की शोभा को नहीं बसायेंगे तब तक माया के फंद से नहीं छूट पायेंगे। इसलिये अपने दिल को राजजी का अर्श बनाकर महंमद साहब के बताये रास्ते पर (शबे मेअराज के समान क्षर अक्षर को पार करके परमधाम) चलिये।

ताथें हिरदे आतम के लीजिए, बीच साथ सरूप जुगल।
सुरत न दीजे टूटने, फेर फेर जाइए बल बल।। सा 11/46

अर्थात् आत्मा के दिल में युगल स्वरूप की शोभा को बसाईये। एक क्षण के लिये भी हमारी आत्मिक दृष्टि से वह शोभा अलग ना हो।

जब पूरन स्वरूप हक का, आए बैठा माहें दिल।
तब सोई अंग आतम के, उठ खड़े सब मिल।। सिन 4/70

यहां 'जब' 'आए बैठा' शब्दों से स्पष्ट है कि राजजी का पूर्ण स्वरूप दिल में पहले से नहीं बल्कि बसाने की बात कही जा रही है। उसके बाद ही आत्म जागृति सम्भव है।

जब बैठे हक दिल में, तब रूह खड़ी हुई जान।
हक आए दिल अर्स में, रूह जागे के एही निसान।। सिन 4/72

अर्थात् जब राजजी का स्वरूप दिल में अंकित हो जाता है तब आत्मा जागष्त हो जाती है। राजजी हमारे दिल को अर्श बनाकर बैठ जाते हैं, तो इसे ही रूह जागने की निशानी कहते हैं।

मोहे दिल में हुकमें यों कह्या, जो दिल में आवे हक मुख।
तो खड़ा होए मुख रूह का, हक सों होए सनमुख।।सिन.4/23

अर्थात् मेरे दिल में राजजी के हुकम से प्रेरणा आयी कि जब राजजी के मुखारविंद की शोभा मेरे दिल में आ जायेगी तब मेरी आत्मा के मुखारविंद की शोभा भी खड़ी हो जायेगी।

जो माशूक सेज ना आईयां, देख्या सुन्या ना कही बात।
कछु सुख ना लियो इन अंग को, ताए निरफल गई जो रात।।

महामति जी की आत्मा कह रही है कि यदि प्राणप्रियतम श्रीराजजी हमारे धाम हृदय में विराजमान नहीं हुये, (अर्थात् उनकी शोभाहमारे हृदय में ना बसी) ना ही हमने अपने परात्म की शोभा धारण करके उनसे प्रेम भरी बातें कीं, ना ही उनकी प्रेम भरी बातें सुनीं,ना ही परमधाम की आनंदमयी, प्रेममयी दिव्य लीलाओं का रसास्वादन किया, तो फिर इस नश्वर जगत में आना व्यर्थ हो गया।

न्यारा निमख ना होवहीं, करना पड़े ना याद।
आशिक को माशूक का, कछू इन विध लाग्या स्वाद।।

ब्रह्मवाणी के चिंतन एवं चितवनि से हम धीरे धीरे उस स्वाभाविक स्थिति में पहुंच जाते हैं, जिसमें हमारे दिल में राजजी की शोभा अखण्ड रूप से बस जाती है यानि अंकित हो जाती है। याद किये बिना माशूक का स्वरूप हमें पल पल याद आते रहता है।

"जब ए सुख अंग में आवहीं, तब छूट जाये विकार।"

इसे ही कहते हैं पूर्ण जागृति – जब युगल स्वरूप की छबि हमारे दिल में बस जाती है तो पूर्ण ज्ञान, पूर्ण निर्विकारिता, पूर्ण प्रेम, पूर्ण आनंद की स्थिति प्राप्त हो जाती है।

ऐसा आवत दिल हुकमें, यों इस्कें आतम खड़ी होए।
जब हक सूरत दिल में चुभे, तब रूह जागी देखो सोए।। सिन 4/1

अर्थात् जब राजजी का स्वरूप हमारे दिल में अंकित हो जाता है, तब ही हमारी आत्मा जागृत हो सकती है।

चरन कमल मासूक के, चित्त में चुभें जिन।
ए छबि सलूकी भूखन, क्यों कर छोड़ें मोमिन।। सिन 22/113
ए चरन आवें जिन दिल में, सो दिल अर्स मुतलक।
कई मुतलक बातें अर्स की, दिल सब विध हुआ बेसक।। सिन 22/114

अर्थात् राजजी का स्वरूप व राजजी के चरणों की शोभा जब दिल में अंकित हो जाती है, तब आत्मा उस पर से नजर नहीं हटा पाती है। तब ही वास्तविक दिल अर्स होता है। स्मृति/प्रतिबिम्ब केवल कहने की बात है, मूल तन–परात्म की स्मृति जब आ जायेगी तब स्वप्न–जगत कहां रहेगा, यहां तो स्थिति स्वप्न में जागने जैसी ही है।

नींद उड़े रहे न सुपना, और सुपने में देखना हक।सिन. 4/8

नींद खत्म हो जाने पर स्वप्न जगत कहां रहता है। लेकिन स्वप्न जगत में रहते हुए ही हमें परमधाम व राजश्यामा जी की शोभा देखना है।

जब याद तुमें मैं आंऊगा, तबहीं बैठोगे जाग।
गए आए कहूं नहीं, सब रूहें बैठी अंग लाग।। खि. 13/37

अर्थात् राजजी कह रहे हैं कि जब तुम्हें मेरी याद (स्मृति) आ जायेगी, तब ही तुम मूल मिलावे में जाग जाओगी। यहां कोई आया भी नहीं है, जाना भी नहीं है। सभी आत्माऐं वहीं मूल मिलावे में एक दूसरे से चिपक चिपककर बैठी हुयी हैं।

जो याद आवे ए कदम की, तो तबहीं जावे उड़ देह।
कोई बन्ध पड़या फरेब का, आवे जरा न याद सनेह।। सिन. 25/10

अर्थात् जब राजजी के नूरी चरणों की याद (स्मृति) आ जाये तो स्वप्न वजूद, स्वप्न सहित खत्म हो जायेगा। परंतु माया का ऐसा बंधन पड़ा है कि राजजी का प्रेम जरा भी याद नहीं आता। (वास्तव में राजजी ने जानबूझकर खेल दिखाने के लिये माया का पर्दा डाला हुआ है।)

बोए नेक आवे इन घर की , तो अंग निकसे आहे।
सो तबहीं ततखिन में , पिउ जी पे पोहोंचाए।। कि. 93/19

निजघर की जरा भी याद आ जाये तो हम मूल तनों में जागृत हो जायें। किंतु यहां केवल स्वप्न में जागने जैसी बात ही होनी है, वह भी वाणी आधारित ध्यान चितवनी के द्वारा।

इस प्रकार स्पष्ट है कि भाव–लक्ष्य तो परमधाम का ही लेना पड़ेगा। 'दिल दिल' करने से शरीर से ही ध्यान नहीं हटेगा जब हम चितवनी में देखते हैं तो ये थोड़ी सोचते हैं कि दिल में देख रहे या दिमाग में बल्कि परमधाम का ही भाव लिया जाता है।

भविष्य कथन :–यदि दिल में पहले से ही राजजी की शोभा है, और पहले से हमारा दिल अर्श है तो महामति जी क्यूं राजजी को अपने दिल अर्श में आने के लिये आह्वान कर रहे हैं।

अर्श तुमारा मेरा दिल है, तुम आये करो आराम।
सेज बिछायी रूच रूच के, एही तुमारा विश्राम।।
तुम लिख्या फुरमान में, हक अर्स मोमिन कलूब।
सो सुकन पालो अपना, तुम हो मेरे मेहेबूब।। सा. 8/1, 8

अर्थात् हे धनी, आपने कुर्आन में लिखा है कि खुदा का अर्स मोमिनों का दिल होता है, तो अपने उस वचन को पूरा कीजिये और मेरे दिल में आकर विराजमान हो जाईये।

उपरोक्त चौपाईयों में महामति जी की आत्मा, श्रीराजजी को कुर्आन के भविष्य कथन की याद दिलाते हुए दिल में आने के लिये आह्वान कर रही हैं।

प्यारे कदम राखों छाती मिने, और राखों नैनों पर।
सिर ऊपर लिए फिरों, बैठो दिल को अर्स कर।।सा.8/24

इस चौपाई में भी महामतिजी दिल को अर्श बनाकर अखण्ड रूप से बस जाने के लिये प्रार्थना कर रही हैं।

वास्तव में वाणी में जो कहा है कि मोमिनों का दिल अर्स होता है, ये कुर्आन आदि ग्रंथों की भविष्यवाणी के अनुसार कहा गया है। और वह पूरा तब होगा जब सहीं में हमारा दिल खुदा का पूज्यनीय अर्स बन जायेगा।

ऊपर तले अर्स ना कह्या, अर्स कह्या मोमिन कलूब।
ए जानें रूहें अर्स की, जिनका हक मेहबूब।। सिन 23/76
नाहीं जुदा कांही जांही अर्स मांहीं, मिले रूह भेले दिल एक हुए।
तो कलूब किबला भया मकबूल अल्लाह कहया, अव्वल आखिर मिले एक हुए न जुए।। कि 117/3

अर्थात् परमधाम में तो हम राजजी से कभी भी जुदा नहीं हैं, यहां भी दिल में राजजी के विराजमान हो जाने से अब मेरा (महामति जी का) दिल पूज्यनीय अर्श दिल बन गया है।

हकें देखाया किबला, बीच पाइए मोमिन के दिल।
ऊपर तले न दाएं बाएं, सूरत हमेसा असल।।सिन.25/56

यहां 'किबला' शब्द का अर्थ पूज्यनीय होने से है। जो कि बिना राजजी की शोभा दिल में बसे नहीं हो सकता। भविष्यकथन के अनुसार प्रथम दिल अर्श होने वाली मोमिन इंद्रावती है। वास्तव में वाणी में दिल अर्श से संबंधित बहुत सारी बातें या तो भविष्य कथन के रूप में कही गयी हैं या महामति जी के लिये कही गयी हैं।

देखिये महामति जी के लिये कही गयी दिल अर्श की चौपाईयां :–

रात दिन बसें हक अर्स में, मेरा दिल किया अर्स सोए।
क्यों न होए मोहे बुजरकियां, ऐसा हुआ न कोई होए।।सिन.1/3

अर्थात् परमधाम में विराजमान अक्षरातीत श्री राज जी, अब मेरे (महामतिजी के) दिल को अर्श बनाकर इसमें विराजमान हो गये हैं। ऐसी महिमा कभी किसी को न मिली है ना मिलेगी।

ए चरन दोऊ हक के, आये धरे मेरे दिल माहें।
तो अर्स कह्या दिल मोमिन, आई न्यामत हक हैं जाहें।। सिन 3/4

अर्थात् महामति जी की आत्मा कह रही है कि राजजी नख से शिख तक श्रृंगार सजकर मेरे दिल में आकर बस गये हैं। इसलिये मेरे दिल को अर्स कहा है, और फिर सारी न्यामतें इस्क, इलम, जोस, हुकम, मेहेर आदि भी मेरे अंदर आ गयी हैं।

जब राजजी की शोभा, उनका स्वरूप दिल में बस जाता है तो उसके बाद परमधाम की सारी न्यामतें भी दिल में आ जाती हैं।

प्यारे पाऊं मेरे पिउ के, देख नख अंगूठे अंगुरियों।
सो बैठे बीच दिल तखत के, तो अर्स कह्या मेरे दिल को।। सिन 5/3

अर्थात् राजजी के नूरी चरणों की शोभा दिल में बस गयी इसलिये तो मेरे (महामतिजी के) दिल को अर्स कहा है। (इसके बिना कोई भी दिल अर्स का दावा कैसे कर सकता है।)

वस्तर भूखन पेहेर के, मेरे दिल में बैठे आए।
हकें सोई किया अर्स अपना, रूह टूक टूक होए बल जाए।। सिन 23/4

अर्थात् अक्षरातीत श्री राज जी वस्त्रों एवं आभूषणों के श्रृंगार से सुसज्जित होकर मेरे (महामतिजी के) हृदय में आकर विराजमान हो गये हैं। उन्होंने मेरे हृदय को ही अपना धाम बना लिया है।

वस्तर भूखन सब अंगों, कण्ठ श्रवन हाथ पाए।
नख सिख सिनगार साज के, बैठे अर्स दिल में आए।।सिन.4/71

अर्थात् नख से शिख तक श्री राज जी का स्वरूप, वस्त्राभूषणों के श्रृंगार सहित मेरे धाम दिल में आकर विराजमान हो गया है।

यही तो है वास्तविक दिल अर्श,।

देखिये भविष्य कथन के रूप में :–

अर्स अल्ला दिल मोमिन, और दुनी दिल सैतान।
दे साहेदी महंमद हदीसें, और हक फुरमान।। सिन 23/48
ए साहेदी जाहेर सुनो, जो लिखी माहें फुरमान।
अर्स कह्या दिल मोमिन, अर्स में सब पेहेचान।। सिनगार 2/3

अर्थात् महंमद साहब ने कुर्आन व हदीसों में साक्षी लिखी है कि मोमिनों का दिल खुदा का अर्स होता है और दुनियावालों का दिल शैतान का।

इस प्रकार कुर्आन के कथनों की याद दिलाते हुए सुंदरसाथ को प्रेरित किया जाता है कि उस शोभा को दिल में बसा कर खुदा का अर्श बनायें।

वास्तव में मोमिनों के दिल अर्श होने की बात जो वाणी में एवं अन्य धर्मग्रंथों में कही गयी है, वह निसबत के आधार पर कही गयी है, और वह भविष्यवाणी पूरी भी अवश्य ही होनी है, लेकिन शुरू से वैसी स्थिति नहीं होती है। दिल अर्श होने की प्रक्रिया तो वही रहती है।

इस्क रब्द हुआ अर्स में, तो रूहें इत देह धरत।
रूहें चरन तो पकड़े, जो असल हक निसबत।।सिन.7/9
कई मलकूत वारूं तिन खाक पर, जिन दिल ए कदम आवत।
और दिल अर्स न होवहीं, बिना असल हक निसबत।। सिन.7/25
और इलाज जो कई करो, पर पावे ना बिना किसमत।
सो हक कदम ताले मोमिन, जाकी असल हक निसबत।। सिन.7/69

फेर फेर सरूप जो निरखिए, नैना होंए नहीं तृपित।
मोमिन दिल अर्स कह्या, लिखी ताले ए निसबत।। सा.10/1
चाहिए निसदिन हक अर्स में, और इत हक खिलवत।
होए निमख न न्यारे इन दिल, जेती अर्स न्यामत।। सा.10/2

उपरोक्त चौपाई में ''चाहिए निसदिन हक अर्स में'' से यही अभिप्राय है कि मोमिनों का दिल निसबत के कारण अर्श होना कहा है, इस भविष्यकथन के अनुसार जो भी सुंदरसाथ हैं उन्हें अपने दिल में परमधाम व राजश्यामाजी की शोभा को पल पल चिंतन एवं चितवन करना चाहिए, एक पल के लिये भी विस्मृत नहीं करना चाहिए।

सामान्य बोलचाल में भले ही कह दिया जाता है कि ''दिल में देखो, दिल से देखो, दिल में विचार करो, दिल से पेहेचानो, दिल में समझो, लेकिन इसका भाव ये नहीं रहता कि दिल में प्रतिबिम्ब को देखो, या शरीर के दिल अंग में देखो। बल्कि ये भाव रहता है कि अंतर्मुखी होकर हृदय दृष्टि से देखें, वाणी आधारित धारणा ध्यान चितवनी करें। मन में स्मरण करने, चिंतन करने को भी ''दिल में देखो'' कह दिया जाता है।''

ए दिल जाने रूहसों, मुख जुबां पोहोंचे नाहें।
ए मोमिन होए सो विचारसी, अपने हिरदे माहें।। रि.29/21
इन जिमी के जानवर, ताए देखत हक नजर।
ए दिल में तो आवहीं, जो रूह देखे विचार कर।।परि. 30/32

वाणी में सर्वत्र ही राजजी की शोभा को वाणी के आधार पर चिंतन चितवन करके दिल में बसाने कहा गया है।

दसों भोमके मोहोल सुख, कौन देवे मासूक बिन।
सो इत सुख ल्याए इलम, ना तो कौन देवे जिमी इन।।परि.19/19

अर्थात् रंगमोहोल के नौ भोम और दसवीं आकाशी के सत् सुख इस नश्वर संसार में माशूक श्री राजजी हमें तारतम वाणी के द्वारा दे रहे हैं। नहीं तो वह हमें कैसे प्राप्त हो सकता था।

और रूहों की सूरतें, जो असल अर्स में तन।
सो सहूर कीजे हक इलमें, देखो अपना तन मोमिन।।सिन.21/51

अर्थात् ब्रह्मात्माओं के जो तन मूल मिलावे में हैं, उनकी शोभा को तारतम ज्ञान के आधार लेकर चिंतन एवं चितवन कीजिये।

दिल अर्स खुलासा लेय के, और देख अर्स रूह अंग।
रूहों सरभर कोई आवे नहीं, खूबी रूप सलूकी रंग।।सिन.21/79

अर्थात् जिनके हृदय में तारतम ज्ञान बस गया है (वाणी से दिल अर्श हो गया है) वह वाणी के आधार पर (खुलासा लेय के) आत्मिक स्तर पर चिंतन

करते हुए अपने परात्म की शोभा को चितवनी से देखे। परात्म के नूरी तनों की शोभा, रूप, आकृति, रंग आदि की तुलना में इस संसार में कुछ भी नहीं है।

शरीर के दिल अंग में ध्यानः—शब्दों में निहित भाव को ठीक से ना समझने के कारण ही सुंदरसाथ में अनेकों भ्रांतियां आ जाती हैं। **'दिल में देखो**'' शब्द का अर्थ लेते हैं ''शरीर के दिल अंग में ध्यान करें, त्रिकुटी, भृकुटी, दसवे द्वार या बाहर नहीं''

जब हम चितवनी में परमधाम देखते हैं, तब क्या कोई ये विचारता है कि हम परमधाम दिल में देख रहे हैं या दसवे द्वार में। सभी सुंदरसाथ क्षर–अक्षर से परे परमधाम का धारणा लेकर ध्यान करते हैं तो इस कथन की क्या सार्थकता रहती है कि ''शरीर से बाहर कहीं ध्यान नहीं करना चाहिए।'' हृदय चक्र पर तो सारी दुनिया सृष्टि के प्रारम्भ से ध्यान करती आ रही है, और जीवात्मा के ज्योतिस्वरूप को परमात्मा मानकर उसका दर्शन करती है। वाणी आधारित परमधाम की धारणा लेनी है तो दिल में देखने के कथन का क्या मतलब। दिल में देख रहे हैं ऐसा भाव लेंगे तो शरीर की विस्मृति ही सम्भव नहीं हो पायेगी।

दुनिया के दिल में परमात्मा :—बात यहां भी समाप्त नहीं होती बल्कि इसके-साथ ही एक और संशयात्मक बात भी सुनने को मिलती हैं कि ''दुनिया वालों के भी दिल में परब्रह्म हैं'' कहा जाता है कि ''दुनिया कितनी नादान है जो परमात्मा को मंदिर मस्जिद में ढूंढती है, इस अंधी दुनिया को पता नहीं कि दुनियां, तू कहां भागी जा रही है, तेरे दिल के कोने में वो बैठा हुआ है।''

यह बात पूर्णतया वाणी विपरीत है। वाणी में सर्वत्र परब्रह्म का स्वरूप क्षर अक्षर से परे कहा गया है, दुनिया को अपने अपने दिल में देखने के लिये प्रेरित करना तो निजानंदीय सिद्धांत के पूरी तरह विपरीत है। यदि दिल में देखने से ही परमात्मा का दर्शन हो जाता तो दुनिया तो सृष्टि के प्रारम्भ से ही दिल में ध्यान करती रही है। आज तक वहां अज्ञानता में परमात्मा मानकर जीवात्मा के ज्योति स्वरूप का ही तो उन्होंने दर्शन किया है। या कण कण में ब्रह्मसत्ता के प्रकाश का दर्शन करती रही है। वाणी के अनुसार जीव सृष्टि के दिल में तो माया–दज्जाल का वास माना गया है।

दिल मोमिन अर्स कह्या, कह्या दुनी दिल सैतान।
ए जाहेर इन विध लिख्या, आरिफ क्यूं ना करें बयान।। खु. 1/ 33
रूहें उतरी नूर बिलंद से, खलक पैदा जुलमत।
दुनी दिल अबलीस कह्या, दिल मोमिन हक वाहेदत।। खु 4/21

दिल मजाजी जो कहे, ताको अर्स दिल कबूं न होए।
सो आए न सके वाहेदत में, जिन दिल अबलीस कह्या सोए।।छो. क.1/27

यहां कुर्आन पाक के अनुसार भविष्य कथन के रूप में मोमिन व दुनियावालों में अंतर बताया जा रहा है। कि मोमिनों के दिल में खुदा की सूरत बसी होती है और दुनिया वालों के दिल में माया।

ब्रह्म नहीं मिने संसार, मन वाचा रही इत हार।
ढूंढया कईयों कई प्रकार, पर चल्या न आगे विचार।। खुलासा 11/10

अर्थात् इस नश्वर जगत के अंदर परब्रह्म नहीं है। सभी खोज खोज कर हार गये।

हुकमें देत दिखाई, कुदरत पसारा।
ए देखत सब पैदा फना, हक न्यारे से न्यारा।। मा. सा. 17/59अर्थात् यह सारा संसार स्वप्नवत् है, नश्वर है, खुदा तो इस क्षर से परे, अक्षर से भी परे है।

सात हजार राह फरिस्ते, करी इसारत दुनी कयामते।
अब खुदाए ने यों कर कह्या, मैं आसमान जिमी से जुदा रह्या।।63
जेती कोई पैदाईस कुंन, मोको तिनथे जानो भिन्न।
मैं ना इनमें ना इनके संग, बेसुध कहे सब इनके अंग।। 64 ब.क.8

अर्थात् खुदा तआला फरमाते हैं कि मैं इस नश्वर जगत, सांकल्पिक सृष्टि से सर्वथा परे हूं।

सेहेरग से नजदीक :–इसके पश्चात् हम 'सेहेरग से नजदीक' विषय पर विवेचना करेंगे। कुछ सुंदरसाथ की मान्यता है कि राजजी हमारे दिल में सेहेरग से भी नजदीक हैं, जबकि ये बात भी वाणी के पूर्णतः विपरीत–निराधार है। वाणी में सेहेरग से नजदीक का भाव यह नहीं है। वाणी के अनुसार ये संसार स्वप्नवत है, परमधाम व राजजी हमसे दूर नहीं है बल्कि हम सेहेरग से नजीक राजजी के चरणों में ही मूल मिलावे में बैठे हैं।

इतहीं बैठे देखें रूहें, कोई आया नहीं गया।
तुम जानों घर दूर है, सेहेरग से नजीक कह्या।। खु. 10/44

अर्थात् मूल मिलावे में ही बैठे बैठे सभी आत्मायें माया का खेल देख रही हैं, कोई भी परमधाम से बाहर आया–गया नहीं है। स्वप्न जगत में ऐसा लग रहा है जैसे परमधाम कहीं बहुत दूर है, लेकिन वह हमारे सेहेरग से भी नजदीक है, यानि हम सेहेरग से नजदीक वहीं मूल मिलावे में विराजमान हैं।

नहीं कायम चौदे तबक, सो इत दिखाय दिया।
सेहेरग से नजीक, अरस बका में लिया।। खु. 10/45

अर्थात् ये चौदे लोक तो नश्वर हैं, स्वप्नवत हैं, यहीं बैठे बैठे तारतम ज्ञान के द्वारा हमें सेहेरग से नजदीक परमधाम में बैठा दिया अर्थात् वहां बैठे होने का ज्ञान करा दिया।

दुनिया बीच ब्रह्माण्ड के, ऐसा होए जो इलम लिये ए।
हक नजीक सेहेरग से, बीच बका बैठावे ले।।खु. 12/25

अर्थात् यह तारतम ज्ञान पाने के बाद हमारी आत्मिक स्थिति ऐसी हो जाती है कि हमें ऐसा लगने लगता है कि हम सेहेरग से नजदीक मूल मिलावे में ही राजजी के चरणों में बैठे हुए हैं।

अरस ना चौदे तबक में, सो लिये इलम ईसा के।
नजीक देखाया सेहेरग से, बीच अरस बैठाया ले।।खु. 17/40

अर्थात् परमधाम इस चौदे लोक में नहीं है। लेकिन तारतम ज्ञान से पता चला कि हम वहीं परमधाम में सेहेरग से नजदीक बैठे हैं, (ये झूठा मायावी संसार तो मात्र दृष्टिगोचर हो रहा है।)

ए बल देखो कुंजीय का, रूहें बीच चौदे तबक के आए।
सो इलमें देखाया झूठ कर, बीच अर्स के बैठाए।।सागर13/41

अर्थात् तारतम वाणी रूपी कुंजी की शक्ति को देखिये, जो चौदह लोक को स्वप्नवत् सिद्ध कर हमें मूल मिलावे में बैठा देता है यानि वहां बैठे होने का अहसास करा देता है।

एह इलम जिन आइया, सेहेरग से नजीक ताए।
ए पट नजरों खोल के, लिए अर्स में बैठाए।। खिलवत 6/8

अर्थात् तारतम ज्ञान प्राप्त होने पर सेहेरग से भी नजदीक मूल मिलावे में बैठे होने का ज्ञान हो जाता हैं।

यहां प्राणनली से नजदीक कहने का तात्पर्य ये नहीं शरीर से दूरी नापी जा रही है, बल्कि यहां भाव ये है कि प्राणनली इतनी बारीक होती है कि उसके हल्का सा दबने से मृत्यु हो सकती है, उसी प्रकार राजजी और हमारे बीच जरा भी दूरी नहीं है। हम वहीं मूल मिलावे में राजजी के नजदीक बैठे हुए हैं।

दुनी मगज न जाने मुसाफ का, तो देखे अर्स को दूर।
जो जानें हक इलम को, तो देखें मोमिन हक हजूर।।सिन.23/120

अर्थात् दुनिया वालों को धर्मग्रंथों के रहस्य नहीं पता होने से परमधाम को दूर देखते हैं, परंतु जिसे तारतम ज्ञान प्राप्त हो गया होता है वे मोमिन सुंदरसाथ स्वयं को मूल मिलावे में राजजी के चरणों में देखते हैं।

बंझापूत फूल आकास, और ससिक सिंग।

कह्या वेद कतेब में, भंग न कछू अभंग।।सिन.26/25

वेद–कतेब में ऐसा कहा गया है कि जिस प्रकार बन्ध्या स्त्री के पुत्र नहीं होता, आकाश का फूल नहीं होता और खरगोश के सींग नहीं होते, उसी प्रकार इस जगत् का भी कोई अस्तित्व नहीं है। जो कुछ है ही नहीं, वह नष्ट क्या होगा या अखण्ड क्या होगा?

यों असल खेल की है नहीं, ए तो दिल में देखाई देत।

किया हुकमें महंमद रूहों देखने, तो भिस्त में इनों को लेत।।सिन26/26

अर्थात् वास्तव में इस स्वप्नवत जगत का अस्तित्व नहीं है, ये तो मात्र आत्माओं के दिल में दिखायी दे रहा है। (इसलिये तो कहा है कि ''सुपन होत दिल भीतर'')

सो इलम रूहअल्ला, ले आया हक का।

सेहेरग से नजीक देखाए के, माहें बैठावत बका।। खिलवत 6/19

अर्थात् श्यामा जी परमधाम से तारतम ज्ञान लेकर आयीं, जिसके द्वारा हमें सेहेरग से भी नजदीक मूल मिलावे में बैठे होने का ज्ञान करा दिया/बैठा दिया।

तिन वास्ते हकें पैदा किया, दई दूर जुदागी जोर।

और नजीक बैठाए सेहेरग से, यों देखाया खेल मरोर।। खि. 11/53

अर्थात् राजजी ने इस स्वप्न जगत के माध्यम से हमें दूरी–जुदागी का अहसास भी करा दिया है और ज्ञान के द्वारा मूल मिलावे में सेहेरग से भी नजदीक बैठा दिया अर्थात् बैठे होने का ज्ञान करा दिया है।

अर्स बका बीच ब्रह्मांड के, चौदे तबकों में सुध नाहें।

किया सेहेरग से नजीक, गिरो बैठी बका माहें।। खिलवत 11/54

अर्थात् चौदे लोकों में परमधाम का ज्ञान नहीं था, हमें ज्ञान द्वारा पहचान कराया कि हम परमधाम में ही राजजी के चरणों में सेहेरग से भी नजदीक बैठे हैं।

इलम मेरा उनों में, जाए करो जाहेर।

मैं सेहेरग से नजीक, नहीं बका थें बाहेर।। खिलवत 13/44

अर्थात् राजजी श्यामा जी से कह रहे हैं कि तारतम ज्ञान से आत्माओं को पहचान कराओ कि मैं उनके सेहेरग से भी नजदीक मूल मिलावे में ही हूं, परमधाम से बाहर कहीं नहीं गया हूं।

बातून खुले ऐसा हुआ, सेहेरग से नजीक हक।

तुम बैठे बीच अर्स के, कदम तले बेसक।। खिलवत 13/53

चौदे तबकों न पाइए, हक बका ठौर तरफ।

सो कदम तले बैठावत, ऐसा इलम का सरफ।। खिलवत 13/54

अर्थात् तारतम वाणी के द्वारा मूल मिलावे में सेहेरग से भी नजदीक बैठे होने का ज्ञान हुआ। चौदे लोकों मे कोई भी परमधाम का ज्ञान नहीं प्राप्त कर पाया, यह ऐसा तारतम ज्ञान है जो हमें मूल मिलावे में राजजी के चरणों तले बिठा देता है।

काहू तरफ न देखाई अपनी, यों रहे चौदे तबक से दूर।

सो सेहेरग से नजीक तुम हीं, हमको लिए कदमों हजूर।। सिन 23/34

अर्थात् चौदे लोकों में किसी को भी अपना ज्ञान नहीं दिया, और हमें बताया कि हम सेहेरग से नजदीक राजजी के चरणों में ही मूल मिलावे में बैठे हैं।

रूहें तन माहें अर्स बका, और अर्स में बैठे बोलत।

तो नजीक कहे सेहेरग से, देखो मोमिनों हक हिकमत।। सिन.23/88

अर्थात् ब्रह्मात्माओं के मूल तन मूलमिलावे में राजजी के चरणों में विराजमान हैं, वहां से बैठे बैठे वे स्वप्नमयी जगत देख रहे हैं इसलिये उन्हें सेहेरग से नजदीक कहा गया है।

रूह तन की असल अर्स में, अर्स ख्वाब नहीं तफावत।

तो कह्या सेहेरग से नजीक, हक अर्स दुनी बीच इत।। सिन 26/13

अर्थात् आत्माओं के असल तन अर्स में हैं, वहीं बैठे बैठे स्वप्नवत दिल में संसार को देख रही हैं, इस प्रकार परमधाम व स्वप्न जगत में दूरी नहीं है। इस कारण तेा कहा कि दुनिया में रहते हुए भी खुदा हमारे सेहेरग से नजदीक है। (क्योंकि हमारे मूल तन परमधाम में राजजी के चरणों में विराजमान हैं।)

क्यों वतन क्यों खसम, कौन ठौर क्यों नूर।

ए सेहेरग से देखे नजीक, जो मोमिन सदा हजूर।।सनंध 37/102

अर्थात् परमधाम व परब्रह्म प्रियतम श्री राजजी की पूर्ण पहचान तारतम ज्ञान से होने के पश्चात् ब्रह्मात्माऐं स्वयं को सेहेरग से भी नजदीक मूल मिलावे में देखती हैं।

कबूं न जुदागी बीच वाहेदत, ए इलमें किए बेसक।

तेहेकीक बैठे तले कदमों, न जुदे रूहें हादी हक।।सिन.27/32

अर्थात् तारतम ज्ञान ने संशयरहित कर दिया है कि हम मूल मिलावे में राजजी के चरणों में ही बैठे हैं, वहां से कभी भी जुदागी नहीं हो सकती है।

जब देखिए सामी खेल के, तो बीच पड़्यो ब्रह्मांड।

एती जुदाई हक अर्स के, और खेल वजूद जो पिंड।। सिन.27/36

अर्थात् जब इस स्वप्नवत् जगत की तरफ देखते हैं तो ऐसा लगता है कि हम परमधाम से बहुत दूर आ गये हैं, यह संसार और शरीर हमारे और मूल

तन के बीच आड़ा हो गया है।

हक इलमें ए पिंड देखिए , ए पिंड बीच अर्स तन।

एक जरा जुदागी ना रही, अर्स वाहेदत बीच वतन।। सिन.27/37

अर्थात् तारतम ज्ञान की रोशनी में इस स्वप्न तन की हकीकत देखिये, यह स्वप्न तन भी परात्म के अंदर (दिल में) ही है। इस प्रकार परात्म व स्वप्न तन के बीच जरा भी जुदागी नहीं रही। (चौपाई में 'ए पिण्ड' शब्द प्रयुक्त हुआ है ना कि ''इन पिण्ड'' शब्द। 'ए पिण्ड' शब्द का अर्थ होता है – 'यह पिण्ड'। वैसे भी स्वप्न तन के अंदर मूल तन नहीं होता, मूल तन के भीतर ही स्वप्न, स्वप्न तन एवं स्वप्न तन का दिल सब रहता है। और देखने का तो यहां कोई प्रसंग ही नहीं है। ''सुपन होत दिल भीतर'' ''उन दिल बीच ए दिल'')

अर्स बका बीच ब्रह्माण्ड के, सुध चौदे तबको नाहें।

सो हमको नजीक सेहेरग से, पट खोल लिये बका माहें।। मा. सा. 2/2

अर्थात् चौदे लोकों में परमधाम का ज्ञान नहीं था, हमें ज्ञान द्वारा सेहेरग से भी नजदीक मूल मिलावे में ले लिया यानि पहचान कराया कि हम परमधाम में ही राजजी के चरणों में सेहेरग से भी नजदीक बैठे हैं।

चौदे तबक के बीच में, तरफ न पाई किन।

हादी गिरो अरस बीच में, बैठाए इलमें कर रोसन।। मा सा 17/116

अर्थात् चौदे लोक के इस संसार में परमधाम की दिशा कोई भी नहीं जान पाया। तारतम ज्ञान के द्वारा परमधाम मूलमिलावे में श्री राजश्यामाजी और सखियों के बैठे होने का ज्ञान करा दिया।

सेहेरग से नजीक हक अर्स, बीच हक इलम देवे बैठाए।

ऐसा इलम लदुन्नी, रूहअल्ला ले आए।। मा सा 17/117

अर्थात् तारतम ज्ञान हमें परमधाम में राजजी के चरणों में सेहेरग से भी नजदीक बैठा देता है। ऐसा शक्तिशाली तारतम ज्ञान रूहअल्ला ले आये हैं।

इस प्रकार और भी बहुत सारी चौपाईयां हैं, जिनसे स्पष्ट हो जाता है कि सेहेरग से नजदीक होने का अर्थ संसार का स्वप्नवत होना और हमारे मूल तनों का परमधाम में होना है। सिंधी ग्रंथ की निम्न चौपाई का भी यही भाव है।

सेहेरग से नजीक, आड़ा पट न द्वार।

खोली आंखें समझ कीं, देखती न देखे भरतार।। सिंधी 16/2

अर्थात् हम सेहेरग से भी नजदीक मूल मिलावे में राजजी के चरणों में विराजमान हैं, ये दृश्यमान जगत व स्वप्न वजूद तो मात्र माया का भ्रम है, तारतम ज्ञान पाने के बाद हम इतनी सी बात क्यूं नहीं समझ पा रहे हैं।

(ज्ञान तो प्राप्त हो गया किंतु उसका चिंतन और अहसास नहीं है)

इसके बाद की चौपाईयों में हुकम का वर्णन शुरू हो जाता है कि यहां सब कुछ हुकम ही है, रूहें यहां नहीं आयी हैं। इस प्रकार आगे की चौपाईयों से इस चौ. का मिलान हो जाता है कि ये संसार अस्तित्वहीन, स्वप्नवत है, हम मूल मिलावे में ही राजजी के चरणों में बैठे हैं।

हुकम इलम खेल एकै, और कोई न कहूं दम।
इत रूह न कोई रूहन की, जो कछू होए सो हुकम।। सिंधी 16/3
अपनी सुरतें हुकम, खेलावत हुकम।
खेलत सामी हुकमें, ए देखावत तले कदम।। सिंधी 16/4

इस चौपाई में ''ए देखावत तले कदम'' से पूर्णतया स्पष्ट हो जाता है कि सेहेरग से नजीक का अर्थ वहीं मूल मिलावे में बैठै बैठे खेल देखने से है। आगे कुछ और चौपाईयां प्रमाण के रूप में देखते हैं।

हक बिना जो कछु कहे, सो होवे मुसरक।
और जरा नहीं कहूं कितहूं , यों कहे इलम हक।।मा सा 17/58

अर्थात् जो परमात्मा के सिवा किसी दूसरे वस्तु की अनादि सत्ता मानता है वह मुसरक (बहुदेववादी, काफिर) है। परमेश्वर के सिवा कुछ भी सत्य नहीं है, सब नाशवान है। ऐसा तारतम ज्ञान कहता है।

बाहेर तो ना जाए सको, छेह न आवे जिमी इन।
एक जरा जुदा न होए सके, तुमें ठौर न बका बिन।।खि. 15/71

अतः परमधाम तो अनंत, असीमित है, जब सीमा ही नहीं है तो बाहर कैसे जाया जा सकता है, परमधाम के सिवा दूसरा कुछ है ही नहीं।

हुआ बिछोड़ा बीच ब्रह्माण्ड के, एते पड़े थे हम दूर।
सो हकें इलम ऐसा दिया, बैठे कदमों तले हजूर।।सिन.24/36

अर्थात् इस स्वप्नमयी जगत् में हमें ऐसा लग रहा था कि हम परमधाम से कहीं बहुत दूर आ गये हैं, लेकिन तारतम ज्ञान से हमें अहसास हो गया है कि हम मूल मिलावें में ही राजजी के चरणों में ही नजदीक बैठे हैं।

सुपन उड़े जब मोमिनों, उठ बैठे अर्स वजूद।
कहे खासे बंदे दरगाही रूहें, कदमों हमेसा मौजूद।। मा सा 4/85

अर्थात् स्वप्न की सषष्टि स्वप्न के साथ ही खत्म हो जाती है। जबकि जिनके मूल तन परमधाम में हैं, वे नींद–स्वप्न खत्म होने के बाद मूल मिलावे में खड़े होंगे। (इसीलिये तो उन्हें सेहेरग से नजदीक कहा है।)

ज्यों ज्यों होवे अर्स नजीक, खेल त्यों त्यों होवे दूर।
यों करते छूट्या खेल नजरों, तो रूहें कदमै तले हजूर।।सिन.24/13

अर्थात् सामान्य रूप से ये संसार सत्य और परमधाम काल्पनिक प्रतीत होता है लेकिन जब तारतम वाणी का आधार लेकर हम परमधाम के चिंतन व

चितवन की राह में आगे बढ़ते हैं तो धीरे धीरे परमधाम साक्षात् प्रतीत होने लगता है और संसार स्वप्नवत् और अंततः हम मूल मिलावे में स्वयं को पाते हैं।

हक हकीकत मारफत, रूहें इस्के राह लई जाए।
सो बिन चले पाउं हक बका, दई सेहेरग से नजीक बताए।। मा सा 4/93

अर्थात् हकीकत व मारफत का ज्ञान होने के पश्चात् परमधाम में बैठे होने व राजजी के ही अंगरूपा आत्मायें होने की पहचान होती है। और पता चलता है कि ये संसार स्वप्नवत है, हम वहीं मूलमिलावे में राजजी के चरणों में बैठे हैं, तो चलने की भी जरूरत नहीं रहती यानि परमधाम को प्राप्त करने के लिये विशेष रूप से कोई जप–तप–साधना की आवश्यकता नहीं रहती, मात्र निजस्वरूप को याद करने की जरूरत रहती है। (मात्र योग साधना, जप, तप करके कोई जीव सृष्टि परमधाम नहीं प्राप्त कर सकता, ब्रह्मसृष्टि वहीं मूल मिलावे में विराजमान है, उसे मात्र ये याद करने की जरूरत है और याद आने का तरीका है वाणी आधारित परमधाम, निजस्वरूप का चिंतन एवं चितवन) यहां 'बिन चले पाऊं '' शब्द 'आड़ो पट न द्वार' से समान अर्थ रखता है। इसी को किरंतन ग्रंथ में इस प्रकार कहा गया है :–

तू देख नाटक निमख को, अब करे कहां विचार।
पाउं पल में उलंघ ले, ब्रह्माण्ड शुन्य निराकार।। किरंतन

इसी विषय से संबंधित एक और चौपाई है, जिसके विषय में कुछ सुंदरसाथ में संशय रहता है :–

बैठे मासूक जाहेर, पर दिल ना लगे इत।
मासूक मुख देखन को, हाए हाए नैना भी ना तरसत।। सिन 25/7

इस चौपाई का ऐसा अर्थ प्रतीत होता है कि मासूक राजजी हमारे दिल में बैठे हैं, लेकिन हमें उन्हें देखने की इच्छा नहीं होती है। जबकि इस प्रकरण के इससे पहले की चौपाईयों का अवलोकन करें तो पता चलता है कि यहां मूल मिलावे की ही बात है। देखिये पिछली चौपाईयां :–

मोमिन हक को जानत, नजीक बैठे हैं इत।
हक कदम हमारे हाथ में, पर हम नजरों ना देखत।। सिन 25/4

अर्थात् आत्मायें तारतम ज्ञान से अच्छी तरह से जानती हैं कि हम राजजी के चरणों में (मूल मिलावे में सेहेरग से भी) नजदीक बैठे हैं, राजजी के चरण कमल हमारे हाथ में हैं, पर हमें वह नहीं दिख रहा क्योंकि हमारे दिल में ये स्वप्न आ गया है। ('हक कदम हमारे हाथ में' से स्पष्ट है कि यहां मूल मिलावे की ही बात चल रही है।)

ए तेहेकीक किया हक इलमें, इनमें जरा न सक।
यों नजीक जान पेहेचान के, हम बोलत ना साथ हक।। सिन 25/5

अर्थात् तारतम ज्ञान से यह निश्चित हो गया है, इसमें जरा भी शक नहीं कि हम राजजी के चरणों में बैठे हैं, इतना नजीक जानकर भी हम राजजी से क्यूं नहीं बोलते।

बैठे मासूक जाहेर, पर दिल ना लगे इत।
मासूक मुख देखन को, हाए हाए नैना भी ना तरसत।। सिन 25/7

अर्थात् मूल मिलावे में (हमारे सामने) श्री राज जी साक्षात् बैठे हैं, और उनसे जुदागी का अनुभव करते हुए भी उनसे मिलने, उन्हें देखने के लिये हमारा दिल क्यूं नहीं तरसता है।

सेहेरग से नजदीक बताने का उद्देश्य मात्र यही है कि हमारे मन में हमेशा यह भावना बनी रहे कि हम मूल मिलावे में राजजी के चरणों में बैठे हैं। ''**सुरत एकै राखिये, मूल मिलावा माहे''** राजजी का जोश(आवेश), इल्म, स्वरूप भी हमें यही याद दिलाने के लिये तो आया है।

ए तुम ताले तो आइया, जो तुम असल खिलवत।
निसदिन सहूर एही चाहिए, हक बैठे तुमें खेलावत।। सागर 1/33

अर्थात् हमें हर पल यही चिंतन करना चाहिए कि हम मूल मिलावे में बैठे हैं, वहीं बैठाकर राजजी हमें माया का ये खेल दिखा रहे हैं। इसी बात को किरंतन ग्रंथ में इस प्रकार कहा है।

तूं आपे न्यारी होत है , पिउ नहीं तुझ से दूर।
परदा तूं ही करत है , अंतर न आडे नूर।। कि. 132/5

अर्थात् अज्ञानता के कारण ही हम स्वयं को परमधाम व राजजी से दूर इस माया जगत में देख रहे हैं, जबकि वास्तव में हम मूल मिलावे में राजजी के चरणों में ही विराजमान हैं, हम ज्ञान दृष्टि से जानते हुए भी इस तथ्य का गहराई से चिंतन व चितवन नहीं करते इसलिये राजजी से दूरी महसूस होती है। जबकि राजजी हमारे सेहेरग से भी नजदीक हैं। (उक्त चौपाई में 'अंतर' शब्द का अर्थ 'दूरी' होगा, 'आड़े' का अर्थ 'बीच में' होगा और 'नूर' का अर्थ राजजी के नूर से है, अर्थात् हमारे व राजजी के बीच में कोई भी दूरी नहीं है। हम सेहेरग से भी नजदीक मूल मिलावें में राजजी के चरणों में विराजमान हैं)

वाणी में दुनिया वालों के विषय में भी बताया है। उससे से भी सेहेरग से नजदीक होने का वास्तविक आशय पता चलता हैः—

जाकी न असल अर्स में, सो सेहेरग से नजीक क्यों होए।
वह फना बका को क्यों मिले, वाकी अकल में न आवे सोए।। मा सा 4/80

अर्थात् जिनके असल तन मूल मिलावे में नहीं हैं, वे सेहेरग से नजीक कैसे हो सकते हैं।

रूबरू होना अर्स तन से, इन फना वजूद नासूत।
नजीक ना होए बिना अर्स तन, नूर लाहूत परे हाहूत।। मा सा 4/82

अर्थात् जिनके मूल तन परमधाम मूलमिलावे में नहीं है, वे किस प्रकार रूबरू हो सकते हैं अर्थात् सेहेरग से नजदीक हो सकते हैं।

दुनी असल जिनों तारीकी, सो इलमें करो पेहेचान।
ताको नजीक सेहेरग से, खाली हवा ला मकान।। मा सा 4/83
नाहीं करे बराबरी है की, क्यों मिले दाखला ताए।
बका नींद उड़े उठें अर्स में, फना नींद उड़े उड़ जाए।। मा सा 4/84

अर्थात् दुनिया वालों के सेहेरग से नजदीक निराकार–महाशुन्य है। क्योंकि उनकी उत्पत्ति वहीं से हुयी है, उनका असल वही है।

इस विषय में और भी बहुत सी चौपाईयां वाणी में मौजूद हैं, लेकिन विस्तार भय से नहीं लिख पा रहा हूं।

अब हम वाणी के कुछ उन चौपाईयों के ऊपर चर्चा करेंगे, जिनके जाहेरी अर्थों को लेकर सुंदरसाथ भ्रमित हो रहा है।

1. अब हुकमें द्वारा खोलिया, लिया अपने हाथ हुकम।
दिल मोमिन के आए के, अर्स कर बैठे खसम।। सिन. 2/1

सामान्य रूप से इस चौपाई का अर्थ इस प्रकार माना जाता है कि महामति जी के तन से पांचवे दिन की लीला समाप्त हो जाती है और उसके बाद समस्त सुंदरसाथ के दिल में राजजी आकर विराजमान हो गये हैं। जबकि इसका अर्थ कुछ और ही है। अभी महामति जी के तन से लीला समाप्त नहीं हो रही है बल्कि सिनगार ग्रंथ का अवतरण होने जा रहा है। राजजी के हुकम से राजजी के नख से शिख तक का श्रृंगार वर्णन होने जा रहा है। यही है हुक्म से परमधाम के प्रेम का दरवाजा खोलना। जब हम उपरोक्त चौपाई के आगे पीछे की चौपाईयों का ध्यान पूर्वक अवलोकन करेंगे तो यह बात स्पष्ट हो जायेगी। देखिये पिछले प्रकरण की अंतिम कुछ चौपाईयां और आगे की कुछ चौपाईयांः–

ब्रह्मसृष्टि हुती ब्रज रास में, प्रेम हुतो लक्ष बिन।
सो लक्ष अव्वल को ल्याये रूहअल्ला, पर न था आखिरी इलम पूरन।।47

अर्थात् ब्रज एवं रास लीला में ब्रह्मात्माऐं थीं, वहां प्रेम तो था लेकिन निजस्वरूप–परमधाम का ज्ञान नहीं था। वह ज्ञान श्री देवचंद्र जी लेकर आये तो सही लेकिन राजश्यामाजी के स्वरूप का पूर्ण ज्ञान (सिनगार की वाणी) नहीं आ सका था।

जो लों मुतलक इलम ना आखिरी, तो लों क्या करे खास उमत।
पेहेचान करनी मुतलक, जो गैब हक खिलवत।।सिन. 1/48

अर्थात् जब तक परमधाम एवं राजश्यामाजी के स्वरूप का पूर्ण ज्ञान दुनिया में अवतरित नहीं हो जाता तब तक ब्रह्मात्माऐं भी जागृत कैसे हो सकती हैं।

इत सब मुतलकियां चाहिए, बरनन करना मुतलक।
लिख्या आखिर जाहेर होएसी, सूरत बका जात हक।। सिन.1/53

अर्थात् कुर्आन आदि ग्रंथों में लिखा है कि आखिरत में खुदा की सूरत (ज्ञान) जाहिर होगा, इसलिये सिनगार ग्रंथ का अवतरण होना आवश्यक है।

(इस प्रकार यहां सिनगार ग्रंथ के अवतरण की भूमिका चल रही है।)

हुकम किया चाहे बरनन, ले हक हुकम मुतलक।
करना जाहेर बीच झूठी जिमी, जित छूटी ना कबूं किन सक।। सि.1/64

अर्थात् राजजी का हुक्म राजजी के दिल में लिये अनुसार अब राजजी की शोभा का वर्णन करना चाह रहा है, इस झूठे संसार में जहां आज तक कभी किसी का संशय दूर नहीं हुआ।

दिन एते हक जस गाईयां, लदुन्नी का बेवरा कर।
हके हुकम हाथ अपने लिया, जो दिया था महंमद के सिर पर।। सि.1/65

अर्थात् इतने दिन तक तारतम ज्ञान के द्वारा परब्रह्म की महिमा का गायन किया। जो बात महंमद साहब के द्वारा कहलवायी थी (हुक्म दिया था) कि आखिरत में खुदा की सूरत जाहेर होगी, अब वह कार्य स्वयं राजजी मेरे अंदर विराजमान होकर करवा रहे हैं।

अब हुकमें द्वारा खोलिया, लिया अपने हाथ हुकम।
दिल मोमिन के आए के, अर्स कर बैठे खसम।। सिन. 2/1

अर्थात् अब धाम धनी ने ब्रह्मवाणी द्वारा परमधाम के प्रेम का द्वार खोल दिया है और महंमद साहब के द्वारा दिये वचन के अनुसार मेरे तन में विराजमान होकर स्वयं अपना नख से शिख तक श्रृंगार वर्णन करने का महत्वपूर्ण कार्य करने जा रहे हैं।

(यदि माना जाये कि महामति जी से हुकम ले लिया और उनके तन से लीला समाप्त हो गयी तो फिर सिनगार की वाणी उनके द्वारा क्यूं अवतरित हो रही है, वास्तव में, अब परमधाम के अखण्ड सुखों का दरवाजा खोल दिये हैं महामति जी के तन से परमधाम की व श्रृंगार की वाणी का अवतरण करवा के। पिछले प्रकरण में भी इसी के तरफ संकेत किया गया था।

बरनन करो रे रूहजी, हकें तुम सिर दिया भार।
अर्स किया अपने दिल को, माहें बैठाओ कर सिनगार।। श्रंगार 1/1

रात दिन बसें हक अर्स में, मेरा दिल किया अर्स सोए।
क्यों न होए मोहे बुजरकियां, ऐसा हुआ न कोई होए।। श्रृंगार 1/3
वस्तर भूखन पेहेर के, मेरे दिल में बैठे आए।
हकें सोई किया अर्स अपना, रूह टूक टूक होए बल जाए।। सिन 23/4

इन सभी चौपाईयों में महामति जी के ही धाम दिल में राजजी के विराजमान होने एवं राजजी के स्वरूप का वर्णन करवाने का प्रसंग है। वास्तव में महामति जी सीधे अपना नाम ना लेकर सुंदरसाथ के नाम के आड़े उपरोक्त बात कह रही हैं। आगे की चौपाईयों से यह स्पष्ट हो जायेगा।)

हक अर्स दिल मोमिन, और अर्स हक खिलवत।
वाहेदत बीच अर्स के, है अर्स में अपार न्यामत।। सिन. 2/2
ए साहेदी जाहेर सुनो, जो लिखी माहें फुरमान।
अर्स कह्या दिल मोमिन, अर्स में सब पेहेचान।। सिन. 2/3

अर्थात् कुर्आन की साक्षी देखिये, उसमें लिखा है कि मोमिनों का दिल अर्श होता है और उनके दिल में इल्मे लदुन्नी यानि सारी पहचान होती है, खिलवत, वाहेदत आदि तमाम न्यामतें होती हैं।

(यहां भविष्यकथन के रूप में कुर्आन का कथन स्मरण कराया जा रहा है)

हक हादी रूहें अर्स में, इस्क इलम बेसक।
जोस हुकम मेहेरबानगी, हकीकत मारफत मुतलक।। सिन. 2/4

अर्थात् जहां खुदा का अर्श होता है, वहां इस्क, इलम, जोस, हुकम, मेहेर, हकीकत, मारफत आदि तमाम न्यामतें होती हैं।

(जरा विचार कीजिये कि क्या ये तमाम न्यामतें हमारे दिल में आ गयीं। **''ए चरन दोऊ हक के, आये धरे मेरे दिल माहें। तो अर्स कह्या दिल मोमिन, आई न्यामत हक हैं जाहें।। सिन 3/4।** महामति जी कह रहे हैं–जब राजजी का नख से शिख तक का स्वरूप मेरे दिल में आ गया तब मेरा दिल अर्श कहलाया और फिर सारी न्यामतें भी साथ में आ गयीं।'' राजजी का स्वरूप दिल में आये बिना, शोभा दिल में बसे बिना सारी न्यामतें नहीं आतीं।)

दिल मोमिन अर्स कह्या, सब अर्स में न्यामत।
सो क्यों न करे दिल बरनन, जाकी हक सों निसबत।। सिन. 2/5

(यहां 'क्यों ना करे दिल बरनन'' से स्पष्ट हो जाता है कि महामति जी का ही प्रसंग है और उनके दिल में राजजी स्वयं विराजमान होकर अपना श्रृंगार वर्णन करने जा रहे हैं। महामति जी अपना नाम सीधे न लेकर मोमिन नाम के आड़े ऐसा कह रही हैं। हमारे दिल में भी वे सारी न्यामतें आ सकती हैं, लेकिन वाणी का चिंतन व चितवन करने पर।)

सब बातें हैं अर्स में, और अर्स में वाहेदत।
हौज जोए बाग अर्स में, अर्स में हक खिलवत।। सिन. 2/6
सो अर्स कह्या दिल मोमिन, सो काहे न करे बरनन।
जिन दिल में ए न्यामत, सो मुतलक अर्स रोसन।। सिन. 2/7

(जिन के दिल में ये सभी न्यामतें होंगी, वह अवश्य ही सिनगार का वर्णन कर सकेगा, महामति जी कह रही हैं कि ''जब मोमिनों के दिल को अर्श कहा है तो मैं क्यूं वर्णन ना करूं।'' इस प्रकार कुर्आन की भविष्यवाणी–''मोमिनों का दिल अर्श'' के अनुसार प्रथम दिल अर्श मोमिन महामति जी उस शोभा को दिल में धारण करते हुए राजजी के श्रृंगार का वर्णन करने जा रही हैं।

अब दूसरा विवेचनात्मक विषय लेते हैं

2. कहे हुकमें महामत मोमिनों, हकें पोहोंचाई इन मजल।
कहे सास्त्र नहीं त्रैलोक में, सो हक बैठे रूहों बीच दिल।। सिन. 3/70

अर्थात् महामति जी कह रहे हैं कि राजजी ने मुझे इस मुकाम (आत्मिक स्थिति) पर पहुंचा दिया है कि जिस परमात्मा के विषय में शास्त्र कहते हैं कि वह इस चौदे लोकों के संसार में नहीं है, वह आत्माओं के दिल में बैठ गये हैं।

वास्तव में यहां भी महामति जी के लिये ही बात है, यहां '**बैठे**' और '**हकें पोहोंचाई इन मजल**' शब्दों से स्पष्ट है कि पहले दिल में नहीं थे, अब बैठ गये हैं और अब उस आत्मिक स्थिति में पहुंचा दिया है कि महामति जी के दिल में राजजी का स्वरूप–श्रृंगार बस गया है। (यहां दिल में प्रतिबिम्ब होने के कथन का कोई आशय ही नहीं है।) अब महामति जी का दिल दुनिया वालों के लिये पूज्यनीय खुदा का अर्श हो गया है। हम भी चाहे तो इस स्थिति तक पहुंच सकते हैं लेकिन अभी हम इस स्थिति तक पहुंचे हैं कि नहीं इसका हमें खुद ही चिंतन करना होगा। इसी प्रकरण की कुछ चौपाईयां प्रस्तुत करना चाहूंगा जिससे स्पष्ट हो जायेगा कि राजजी की शोभा दिल में अंकित होना ही दिल अर्श होना है और यहां महामति जी के लिये ही बात है :–

ए चरन दोऊ हक के, आए धरे मेरे दिल माहें।
तो अर्स कह्या दिल मोमिन, आई न्यामत हक हैं जांहें।। सिन. 3/4

अर्थात् महामति जी कह रहे हैं कि राजजी नख से शिख तक श्रृंगार सजकर मेरे दिल में आकर बैठ गये हैं, इसीलिये तो मेरे दिल को अर्श कहा है, **राजजी का स्वरूप आने के साथ ही परमधाम की तमाम न्यामतें मेरे दिल में आ गयी हैं।**

ए बरनन होत सब हुकमें, आया हुकमें बेसक इलम।
हुकमें जोस इस्क सबे, जित हुकम तित खसम।। सिन. 3/64

अर्थात् महामति जी के तन से राजजी के हुकम से सिनगार का वर्णन होने जा रहा है, उन्हीं के हुकम से बेशक इल्म आया है, उन्हीं के हुकम से (दिल में स्वरूप आ जाने से) जोस, इस्क आदि तमाम न्यामतें आ गयी हैं।

(हुकम तो शुरू से ही सृष्टि के कण कण में रहता है **''हुकम तो है सब में, हुकम बिना कोई नाहें'' ''कोई दम न उठे हुकम बिना, कोई हले ना हुकम बिना पात।। सिन 3/62''** परंतु महामति जी के अंदर श्रृंगार का वर्णन करने का हुकम आया है, **''हके तुम सिर दिया भार''** राजजी का स्वरूप आने से तमाम न्यामतें आ गयी हैं, इसलिये कहा है कि **''जित हुकम तित खसम'')**

3. मोतिन के मूंह ऊपर, कुलफ लिख्या माहें फुरमान।
इन गुन्हेगारों के दिल को, अपना अर्स कर बैठे मेहरबान।।खु. 3/70

यहां कहा जा रहा है कि इन गुन्हेगारों के दिल को अपना अर्श बनाकर राजजी बैठ गये हैं। **'कर बैठे'** से स्पष्ट है कि पहले नहीं थे अब आकर बैठ गये हैं, अर्श कर के बैठ तो गये हैं लेकिन इल्म से या स्वरूप से, ये आत्मनिरीक्षण हमें स्वयं करना होगा। वास्तव में यहां ज्ञान से दिल अर्श की ही बात कही जा रही है।

मोमिन रूहें करें कुरबानियां, और मता वजूद समेत।
छोड़ दुनी इश्क लेवहीं, दिल अर्स हुआ इन हेत।। खुलासा 1/36

यह ज्ञान प्राप्त होने के बाद की स्थिति है। जिसको सही माएने में ज्ञान प्राप्त हो जायेगा, वह मुरदार माया की चाहना छोड़कर एकमात्र राजजी का प्रेम दिल में बसायेगा, मात्र उनके चरणों की आशा ही दिल में रखेगा। इस प्रकार उनका दिल अर्श हो जायेगा।

सोई सहूर अर्स का, जो कह्या हक इलम।
सोई मोमिन पे बेसकी, यों अर्स रूहें जुदे ना खसम।। सिन 11/29

अर्थात् जिस तारतम ज्ञान में परमधाम व राजश्यामा जी के स्वरूप का विस्तार से वर्णन किया गया है, उस परमधाम के संशय रहित तारतम ज्ञान को दिल में बसाने की वजह से ही राजजी आत्माओं से जुदा नहीं हैं। (सामान्य तौर से देखा जाता है कि हमारे दिल में दिन रात जिसका चिंतन रहता है तो उसे हमारे दिल में कहा जाता है। इसी प्रकार खुदा की चाहत, प्रेम–विरह जिसके दिल में हो, उसे भी खुदा का अर्श माना जाता है)

ए तीनों मिल किया जहूर, अव्वल आखिर रोसन।
हक बैठे इन इलम में, तो दिल अर्स हुआ मोमिन।। सिन 26/2

अर्थात् इस ब्रह्मवाणी में अक्षरातीत विराजमान हैं, इस तारतम वाणी को आत्मसात् करने के कारण ही ब्रह्मसृष्टियों के दिल को धाम कहा गया है।

तो अर्स कह्या दिल मोमिन, जो पकड़या इलम हक।
हक सूरत सुध अर्सों की, रूहों रही न जरा सक।। सिन 27/44

ब्रह्ममुनियों के हृदय को इसलिये तो धाम कहा गया है, क्योंकि इन्होंने ब्रह्मवाणी के ज्ञान को दिल में धारण कर धाम धनी के स्वरूप की पहचान कर ली है।

वास्तविक दिल अर्श तो स्वरूप से ही होता है। और वह दिल में प्रतिबिम्ब खोजने से नहीं बल्कि वाणी परिक्रमा–सागर–सिनगार के आधार पर चिंतन व चितवन करने पर राजजी की कृपा से दर्शन प्राप्त हो सकता है।

पर हिरदे आवनें रूहों के, मैं कई बिध करत बयान।
ना तो क्यों कहूं रंग नंग धात की, ए तो खिलवत बका सुभान।।सा. 1/19
सब्द न लगे सोभा असलें, पर रूह मेरी सेवा चाहे।
तो बरनन करूं इनका, जानों रूहों भी दिल समाए।। सागर 5/21

अर्थात् ब्रह्मात्माओं के दिल में शोभा बस सके, इसलिये शब्दातीत परमधाम का वर्णन किया जा रहा है।

इन कहे से ऐसा होत है, पीछे आवत फैल हाल।
तो ख्वाब में कायम अर्स का, सुख लीजे नूरजमाल।। परि. 30/70

इस प्रकार परमधाम, श्री राजश्यामाजी का स्वरूप एवं लीलाओं का वर्णन करने से ऐसी स्थिति आ जाती है कि हम फैल (रहनी) से हाल (विरह की आत्मिक स्थिति) में आ जाते हैं और इस प्रकार स्वप्नमयी जगत में रहते हुए भी हम श्रीराजजी के अखण्ड सुख प्राप्त कर सकते हैं।

4. तो नूर रांग पार की क्यों कहूं, जाको सुमार नहीं वार पार।
वह मोमिन देखें दिल अर्स में, जो दिल अर्स परवरदिगार।।२५।।परि. 43

इस चौपाई से ऐसा भ्रम होता है कि मोमिन अपने दिल में ही परमधाम देख लेते हैं, क्योंकि उनके दिल में परमधाम का प्रतिबिम्ब है। इसका कारण यह समझा जाता है कि परात्म के दिल में परमधाम होता है इसलिये आत्मा के दिल में भी परमधाम का प्रतिबिम्ब होता है। आश्चर्य की बात है, यदि दिल में ही परमधाम का पूरा प्रतिबिम्ब दिख सकता है तो वाणी में इतना वर्णन करने की क्या जरूरत थी।

चौपाई में '**वह मोमिन**' और '**जो दिल अर्स परवरदिगार**' शब्द से स्पष्ट है कि यहां सभी सुंदरसाथ की बात नहीं है। बल्कि उन सुंदरसाथ की बात है जिन्होंने अपने दिल को वाणी से अर्श बना लिया है, इस प्रकार उपरोक्त चौपाई का भाव निकलता है कि 'जिस सुंदरसाथ ने वाणी से अपने दिल को

अर्श बना लिया हो, वह अपने दिल में इस विषय में चिंतन करें। उपरोक्त प्रकरण की आगे की चौपाई में भी यह बात स्पष्ट की गयी है।

जो कोई होसी अंग अर्स की, और जागी होए हक इलम।
तो कछू बोए आवे इन सहूर की,जो करे मदत हक हुकम।।परि. 43/38

अर्थात् जो भी परमधाम की आत्मा होगी, और जो तारतम ज्ञान से जागृत हो गयी होगी, तो राजजी की कृपा से परिक्रमा ग्रंथ के चिंतन व चितवन से वह परमधाम के लज्जत को प्राप्त कर सकती है।

जिन दिल हुआ अर्स हक का, सोई लीजो इन अर्स सहूर।
कहे हक हुकम ए मोमिनों, नूर पर नूर सिर नूर।।परि.43/41

अर्थात् जिन सुंदरसाथ का दिल अर्श हो गया है (जिनके दिल में परमधाम की वाणी बस गयी है) वह आत्मिक रूप से इसका चिंतन करे।

इसी प्रकार की और भी चौपाईयां परिक्रमा ग्रंथ में है।

बेसुमार जो फेर फेर कहिए, तो आवत नहीं हिरदे।
तो सब्द में ल्यावत, ज्यों दिल आवे मोमिनों के।। परि. 34/3

अर्थात् 'अनंत–अनंत' बार बार कहने से तो परमधाम की शोभा दिल में नहीं बस सकती इसलिये शब्दों और गिनती में उस शब्दातीत परमधाम का वर्णन किया गया है, ताकि उस परमधाम की शोभा मोमिनों के दिल में बस जाये।

हिसाब बीच ल्याए बिना, हक आवें नहीं दिल माहें।
हक देत लदुन्नी मेहेर कर, हक अर्स आवे बीच जुबांए।। परि. 34/5

अर्थात् राजजी ने मेहेर करके तारतम ज्ञान दिया। शब्दों व हिसाब में लाने की वजह से ही परमधाम व राजजी की शोभा सुंदरसाथ के दिल में बस पायी है।

मोमिन होए सो देखियो, तुमारा दिल कह्या अर्स।
चारों घाट लीजो दिल में, दिल ज्यों होए अरस–परस।। परि. 8/78

अर्थात् जो भी मोमिन हो वह चारों घाटों की शोभा को आत्मिक दृष्टि से देखिये, क्योंकि मोमिनों के दिल को अर्श कहा है इसलिये (वाणी का आधार लेकर) हौजकौसर के चारों घाटों की शोभा को दिल में धारण कीजिये।

यहां कुर्आन के भविष्यकथन 'मोमिनों का दिल अर्श' के अनुसार, वाणी का चिंतन व चितवन करके परमधाम की शोभा को दिल में बसाने के लिये प्रेरित किया जा रहा है। तभी तो परिक्रमा ग्रंथ में 25 पक्ष का वर्णन किया जा रहा है।

सागर ग्रंथ में भी इसी प्रकार कहा गया है :–

पर हिरदे आवनें रूहों के, मैं कई बिध करत बयान।
ना तो क्यों कहूं रंग नंग धात की, ए तो खिलवत बका सुभान।।सा. 1/19

सब्द न लगे सोभा असलें, पर रूह मेरी सेवा चाहे।
तो बरनन करूं इनका, जानों रूहों भी दिल समाए।। सागर 5/21

अर्थात् ब्रह्मात्माओं के दिल में शोभा बस सके, इसलिये शब्दातीत परमधाम का वर्णन किया जा रहा है।

वाणी में कई जगह ''विचार करने'' शब्द की जगह आम बोलचाल की भाषा में ''देखो'' कह दिया है, जिसका भाव रहता है कि ''दिल से विचार करके देखो''।

ए देखें दिल अरस मोमिन, अरस हक बिना होए क्यों कर।
एह विचार तो न करें, जो कुलफ कहे दिलों पर।। खुलासा 1/39

अर्थात् मोमिन अपने दिल में विचार करे कि राजजी की शोभा बसे बिना दिल अर्स कैसे कहला सकता है।

सब मोमिनों को सौंपिया, कह्या मोमिन दिल अर्स।
देख आप दिल विचार के, दिल मोमिन अरस–परस।। सिंधी 15/21

अर्थात् मोमिनों को सारा ज्ञान का खजाना सौंप दिया है, इसलिये उनके दिल को अर्श कहा है, आप अपने दिल में विचार करके देखें

हम उतरें चढ़ें तो खेल में, जो जरा दूसरा होए।
ऐ देखो हक इलम से, अरस अरवा ना उरझे कोए।। सनंध 39/69

इस चौपाई में भी हक इलम से देखने (चिंतन करने) कहा जा रहा है।

ए सुख इन केहेनीय में, क्योंए किए न आवत।
देखो दिल विचार के, कछू तब पाओ लज्जत।।परि.11/61

अर्थात् परमधाम एवं श्रीराजश्यामाजी के सुख वर्णन में किसी भी प्रकार से नहीं आ सकता है इसलिये अपने दिल में विचार कर देखिये, तब कुछ लज्जत प्राप्त हो पायेगा।

क्यों कर कहूं मैं पौरियां, और क्यों कर कहूं झरोखे।
देख देख मैं देखिया, न आवे गिनती में ए।। परि.44/24

अर्थात् परमधाम की गलियां (मेहराबें, द्वार) और झरोखों की शोभा मैं किस प्रकार कहूं, मैं पुनःपुनः चिंतन करते हुए (देख देख मैं देखिया) इस निष्कर्ष पर पहुंची हूं कि इनकी गिनती भी नहीं गिनी जा सकती है।

देख देख मैं देखया, ए सब करत हक हुकम।
ना तो अर्स दिल एता मता लेय के, खिन रहे न बिना कदम।।सिन 4/71

अर्थात् मैंने पुनः पुनः विचार कर के यह निष्कर्ष निकाला है कि ये सब राजजी का हुकम ही कर रहा है।

इत आंखें चाहिए हक इलम की, तो हक देखिये नैना बातन।
नैना बातून खुले हम इलमें, ए सहूर है बीच मोमिन।। सिन 23/109

अर्थात् यहां ज्ञान की दृष्टि चाहिए, तब हम बातिनी दृष्टि से राजजी की पहचान कर सकते हैं, ऐसी बातिनी ज्ञान की दृष्टि मात्र सुंदरसाथ के पास ही होती है।

और भी करी बेसक, ए जे कही सुंनत जमात।
इनों लई सब दिल में, बेसक अर्स बिसात।। मा. सा. 17/111
तब हुआ रूहन का, हक अर्स कलूब।
याही हक अर्स में, रूह नजरों मिले मेहेबूब।। मा. सा. 17/112

अर्थात् परमधाम का सारा ज्ञान रूहों ने अपने दिल में धारण किया जिससे उनका दिल अर्श केहेलाया। परमधाम के ज्ञान से युक्त दिल में फिर चिंतन एवं चितवन के द्वारा आत्मिक दृष्टि से राजजी का दीदार हुआ। (यहां दिल मे मिलने से तात्पर्य दर्शन होने से है, भाव तो परमधाम मूल मिलावे का ही रहता है।)

इस चौपाई ''**वह मोमिन देखें दिल अर्स में, जो अर्स दिल मोमिन''** से कई सुंदरसाथ भ्रमित हो जाते हैं कि चितवनि करते समय परमधाम को अपने हृदय में देखना चाहिए अन्यत्र त्रिकुटी, दसवें द्वार या बाहर की ओर नहीं। कृपया विचार करें कि जब हम चितवनी में परमधाम देखते हैं, तब क्या कोई सोचता है कि हम परमधाम दिल में देख रहे हैं या त्रिकुटी–भष्कुटी , दसवे द्वार में। यदि दिल में देख रहे भाव लेंगे तो शरीर की विस्मृति ही नहीं हो पायेगी, शरीर में ही ध्यान अटके रहेगा। ध्यान तो परिक्रमा, सागर, सिनगार की वाणी का आधार लेकर क्षर–अक्षर से परे परमधाम की धारणा लेकर ही करना होता है। शरीर के हृदय चक्र में ध्यान करेंगे तो परमधाम की धारणा का क्या मतलब और वाणी आधारित परमधाम की धारणा लेनी है तो दिल में देखने के कथन का क्या तात्पर्य। हृदय चक्र पर तो सारी दुनिया सृष्टि के प्रारम्भ से जीवात्मा के ज्योतिस्वरूप को परमात्मा मानकर उसका ध्यान करती आ रही है, क्योंकि हृदय में जीवात्मा का वास माना जाता है, कई मतपंथ (वेदांती) आत्मा को ही परमात्मा मानते हैं इसलिये हृदय में ध्यान करते हैं, कई मत पंथ (आर्य समाजी) हृदय में जीवात्मा के साथ परमात्मा का वास मानते हैं इसलिये वे हृदय में परमात्मा का ध्यान करते हैं। वाणी में सर्वत्र क्षर अक्षर से परे परमधाम का भाव लेकर ध्यान करने कहा गया है।

हो मेरी सत आतमा, तुम आओ घर सत खसम।
नजर छोड़ो री झूठ सुपन, आए देखो सत वतन।। कि 76/2

अर्थात् हे मेरी सत आत्माओं, तुम अपने सत प्रियतम के घर आओ, झूठी दुनिया की आशा छोड़ो और अपने सत्य परमधाम की शोभा देखो।

महामत कहे मलपतियां, आओ निज वतन।
विलास करो विध विध के, जागो अपने तन।। कि 80/15

अर्थात् हे आत्माओं, अपने निजवतन में सुरता ले जाओ, ताकि अपने मूल तनों में जागृत होकर अनेक तरह की प्रेममयी लीलाओं से आनंद प्राप्त कर सको।

हे पण भूल असांहिजी, जे हिनमें मंगूं सुख।
बिओ डिसण वडो कुफर, गिंनी इलम बेसक।। सिंधी 3/24

अर्थात् ये भी हमारे भूल है कि ऐसा तारतम ज्ञान पाकर हम यहीं पर राजजी का सुख मांगते हैं।

खेल त जरो न्हाए कीं, ए इलमें खोली नजर।
हित बेही मंगूं सुख अर्सजा, धणी मिडन कोठे घर।। सिंधी 3/25

अर्थात् ये खेल तो अस्तित्व हीन है, ये तारतम ज्ञान से स्पष्ट हो गया है, फिर भी यहीं बैठे बैठे धाम का सुख चाहते हैं। जबकि धनी तो हमें धाम में बुला रहे हैं।

ढील मंगूं घर हल्लणजी, बिओ खेल में मंगां सुख।
हिनमें अचे थो कुफर, आंऊं छडी न सगां रूख।। सिंधी 3/26

अर्थात् एक तो घर चलने में देरी कर रहे हैं, दूसरा खेल में ही राजजी का सुख मांगते हैं, यानि सपने में ही रहना चाहते हैं।

इन सब चौपाईयों से स्पष्ट है कि यहीं पर राजजी का सुख मांगने की अपेक्षा धाम चलने का विरह ज्यादा महत्वपूर्ण होता है। धाम चलने का विरह होगा तो यहां भी सुख प्राप्त हो जाता है।

अब अगले विवेचनात्मक चौपाई की ओर जाते हैं :–

5. पट एही अपने दिलको, हकें सोई दिल अर्स कह्या।
हक पट अर्स सब दिल में, अब अंतर कहां रह्या।। सिन 11/63

इस चौपाई का सामान्य रूप से ये अर्थ लगाया जाता है कि राजजी हमारे दिल में बैठे हैं, लेकिन दिखते इसलिये नहीं है कि बीच में एक पर्दा है। इस चौपाई का वास्तविक आशय जानने के लिये हमें इस प्रकरण की आगे पीछे की कुछ चौपाईयों का भी अवलोकन करना होगा।

सोई सहूर अर्स का, जो कह्या हक इलम।
सोई मोमिन पे बेसकी, यों अर्स रूहें जुदे ना खसम।। सिन 11/29

अर्थात् तारतम ज्ञान से परमधाम की सुध पाकर मोमिन बेशक हो जाते हैं कि हम परमधाम की ब्रह्मात्मायें हैं, परमधाम हमारा निजघर है, ये संसार स्वप्नवत झूठा है, इस प्रकार राजजी आत्माओं से जुदे नहीं होते।

(निजस्वरूप की पहचान हो जाने से सुंदरसाथ के हृदय में पल पल राजजी व परमधाम का ही चिंतन–स्मरण होते रहने से राजजी का साथ होना कहा है। इसी बात को विभिन्न तरीकों से जगह जगह वर्णन किया है। **"तो अर्स कह्या दिल मोमिन, जो पकड़या इलम हक। हक सूरत सुध अर्सों की, रूहों रही न जरा सक।।" सिन 27/44**)

मासूक छाती निरखते, क्यों याद न आवे अर्स।
विचार किए आवे अनुभव, जाको दिल कह्यो अरस– परस।। सिन 11/61

अर्थात् प्रियतम राजजी की छाती (ज्ञानदर्षष्टि से) देखने (जानने) के बाद भी क्यूं निजघर की याद नहीं आती। जिनके मूल तन परमधाम में हैं, और परात्म का दिल व आत्मा का दिल एक दूसरे में ओतप्रोत हैं, उन्हें कुछ तो स्मृति–याद आनी चाहिए। (यहां 'निरखते' शब्द का अर्थ ज्ञान दृष्टि से देखना ही लिया जायेगा क्यूंकि इसी चौपाई के तीसरे चरण 'विचार किए' से स्पष्ट है कि ज्ञान से चिंतन करने पर। वाणी में कई जगह साधारण बोलचाल की भाषा के रूप में 'विचारना' को 'देखना' लिखा है। **सब मोमिनों को सौंपिया, कह्या मोमिन दिल अर्स। देख आप दिल विचार के, दिल मोमिन अरस–परस।। सिंधी 15/21** यह बात अगली चौपाईयों से स्पष्ट है कि आड़ा पट की वजह से राजजी नहीं दिख रहे।)

हकें अर्स कह्या दिल मोमिन, अर्स में मता हक सब।
अजूं हक आड़े पट रहे, ए देख्या बड़ा तअजुब।। सिन 11/62

अर्थात् राजजी ने मोमिनों के दिल को अपना अर्श कहा है, उनके दिल में सारा ज्ञान का खजाना दे दिया है, फिर भी आश्चर्य की बात है कि उन्हें निजस्वरूप की याद नहीं आती (दिल में कोई प्रतिबिम्ब नहीं है। बल्कि स्मृति पर विस्मृति का पर्दा लगा है, जिसके कारण ज्ञान मिलने पर भी स्मृति नहीं आती)

पट एही अपने दिलको, हकें सोई दिल अर्स कह्या।
हक पट अर्स सब दिल में, अब अंतर कहां रह्या।। सिन 11/63

अर्थात् हमारे दिल में इसी नींद/हुक्म का पर्दा है, राजजी ने उसी दिल को अर्श भी कहा है, (वाणी से) राजजी व परमधाम का ज्ञान और फरामोशी/नींद सब दिल में हैं। जब ज्ञान स्वरूप से राजजी दिल में है तो दूरी/विस्मृति नहीं होनी चाहिए थी फिर भी क्यूं है।

(सिनगार ग्रंथ में यही बात बार बार कही गयी है कि इतना ज्ञान पाने के बाद भी आत्मायें जागृति क्यूं नहीं हो पा रही हैं, क्यूं उन्हें निजघर की याद नहीं आती। इसका कारण फरामोशी/हुकम का पर्दा होना ही है।

ए अर्स बका बातें सुन के, एक पलक न रहें अरवाहें।
रूहों हुकम राखे आड़ा पट दे, हक इत लज्जत देखाया चाहें।। सि. 24/25

इसी कारण इसे हुकम इलम का खेल भी कहते हैं – इलम से निजघर की याद दिला रहे और हुकम मूल तन की स्मृति आने नहीं देता है।

ए खेल हुकम इलम का, हमें नींदमें देखावत।
करने हांसी अर्स में, खेल में भुलावत।। सिंधी 15/10)
जो विचार विचार विचारिए, तो हक छाती न दिल अंतर।
ए पट आड़ा क्यों रहे, जब हुकमें बांधी कमर।। सिन 11/64

अर्थात् जो बारीकी से विचार किया जाये तो राजजी की छाती हमारे दिल से दूर नहीं है। फिर भी नींद/फरामोशी का पर्दा क्यूं है।

हमारा दिल परात्म के दिल में है और परात्म मूल मिलावे में राजजी के सामने ही विराजमान है, इस प्रकार राजजी की छाती हमारे दिल से जुदा नहीं है।

''मोमिन असल तन अर्स में, और दिल ख्वाब देखत।
असल तन इन दिल से, एक जरा न तफावत।।'' सिनगार 6/25

अर्थात् सुंदरसाथ का असल तन परमधाम में है, और दिल ख्वाब देख रहा है, इस दिल और मूल तन के बीच जरा भी दूरी नहीं है। (तो फिर राजजी से भी दूरी कहां हुयी)

दिल अर्स कह्या याही वास्ते, परदा कह्या जहूर।
दोऊ दिलके बीचमें, जो दिल देखे कर सहूर।। सिन 11/67

अर्थात् इस प्रकार हम अपने दिल में विचार करें तो पाते हैं कि हमारा दिल अर्स भी (वाणी से) कहा गया है, और परात्म के दिल व स्वप्न तन के दिल के बीच विस्मृति/फरामोशी का पर्दा भी (हुकम से) लगा हुआ है। (सामान्य रूप से अनुभव में आता भी है कि जागृति व स्वप्नावस्था के बीच नींद का ही पर्दा होता है, नींद खत्म तो सपना भी खत्म हो जाता है। ''यों असल खेल की है नहीं, ए तो दिल में देखाई देत।''सिन26/26 का कथन इसी ओर संकेत करता है।)

हक छाती निपट नजीक है, सेहेरग से नजीक कही।
हक सहूर किए बिना, आड़ी अंतर तो रही।। सिन 11/68

अर्थात् राजजी की छाती हमसे अत्यंत नजदीक है, सेहेरग से भी नजदीक कहा है। किंतु वाणी का चिंतन ना होने से हमें दूर प्रतीत हो रहा है।

(हमारे मूल तन परमधाम में होने की वजह से ही वाणी में सर्वत्र राजजी को हमारे सेहेरग से नजदीक कहा गया है :–

रूह तन की असल अर्स में, अर्स ख्वाब नहीं तफावत।
तो कह्या सेहेरग से नजीक, हक अर्स दुनी बीच इत।। सिन 26/13

अर्थात् रूहों के मूल तन परमधाम में हैं, और स्वप्न भी दिल में देख रहे हैं, इस प्रकार स्वप्न जगत और परमधाम में दूरी नहीं है। इस कारण राजजी और परमधाम को इस मायावी जगत में भी मोमिनों के सेहेरग से भी नजदीक कहा गया है।

नकलें असलें जुदागी, एक जरा है आड़ा पट।
कह्या सेहेरग से नजीक, तिन निपट है निकट।। सिन.21/91

अर्थात् मूल तन परात्म एवं स्वप्न तन के बीच मात्र नींद/अज्ञानता का जरा सा पर्दा है, हम वहीं मूल मिलावे में राजजी के चरणों में बैठे हुए हैं इसलिये हमें राजजी के और राजजी को हमारे सेहेरग (प्राणनली) से भी नजदीक कहा गया है।

सो साहेदी देवाई महंमद की, सेहेरग से नजीक हक।
नूर के पार नूर–तजल्ला, इलम माहें बैठावे बेसक।।खि.7/4

मुहम्मद साहब ने भी इसकी साक्षी दी है कि खुदा मोमिनों के सेहेरग से भी नजदीक है। तारतम ज्ञान अक्षर से भी परे रंगमहल मूल मिलावे में हमें (ब्रह्मात्माओं को) सेहेरग से भी नजदीक बैठा देता है यानि बैठे होने का ज्ञान देता है।

अनजानत को इलमें, बेसक दिए देखाए।
कदमों नूरजमाल के, हम सब रूहें लई बैठाए।।खि. 10/78

अर्थात् इस खेल में आकर हम अपने निजस्वरूप को भूल गई थीं, ऐसी अनजान हम रूहों को बेसक इल्म से निजघर की पहचान करा दिये, और मूल मिलावे में राजजी के चरणों में बैठे होने का ज्ञान करा दिये।

असल जाकी अर्स में, सो सेहेरग से नजीक होए।
जो पैदा तारीकी हवा से, क्यों हक नजीक आवे सोए।। मा सा 16/37

अर्थात् जिसकी असल (मूल तन) परमधाम में है, उसे खुदा के सेहेरग से भी नजदीक कहा जाता है, जिनके मूल तन परमधाम में नहीं हैं, जो निराकार से पैदा हुआ है, वह कैसे परमधाम में राजजी के सेहेरग से भी नजदीक आ सकता है।)

हक भी कहे दिलमें, अर्स भी कह्या दिल।
परदा भी कह्या दिलको, आया सहूरें बेवरा निकल।। सिन 11/69

इस प्रकार (वाणी से परमधाम का सारा ज्ञान आने से) हमारा दिल राजजी का अर्श भी कहला रहा है, और नींद/हुकम का पर्दा होने से निजघर की स्मृति भी नहीं आ रही है।

और जित आया हक इलम, अर्स दिल कह्या सोए।

हक न आवें इस्क बिना, और हक बिना इस्क न होए।। सिन 24/41

अर्थात् जिस दिल में राजजी का ज्ञान आ जाता है उसे अर्स दिल कहा जाता है, राजजी का स्वरूप तो इश्क के बिना नहीं आता और राजजी के बिना इश्क भी नहीं होता।

देख देख मैं देखया, ए सब करत हक हुकम।

ना तो अर्स दिल एता मता लेय के, खिन रहे न बिना कदम।।सिन 24/71

अर्थात् गहनता से बार बार विचार करने पर (यहां भी देखने का अर्थ विचारने से है) मैंने पाया कि यह सब राजजी का हुकम कर रहा है नहीं तो दिल में इतना ज्ञान आने के बाद आत्माओं को निजघर की स्मृति तुरंत आ जाती, और वे एक क्षण भी राजजी के बिना इस माया जगत में नहीं रह पाते।

जो पीठ दीजे ब्रह्माण्ड को, हुआ निस दिन हक सहूर।

तब परदा उड़्या फरामोस का, बका अर्स हक हजूर।। सिन 11/70

अर्थात् यदि हम संसारिक चाहना–चिंता, आशा–तृष्णा को छोड़कर दिन रात अपने निजस्वरूप व निजघर का चिंतन/चितवन करेंगे तो (राजजी के हुकम से) हमारी परात्म से फरामोसी का पर्दा हट जायेगा और हम परमधाम में राजजी के सम्मुख मूल मिलावे में जागृत हो जायेंगे।

(ध्यान में डूबना और आत्म जागृति की जो बातें हैं, मात्र स्वप्न में जागने जैसी स्थिति की हैं, क्योंकि निजस्वरूप की स्मृति आने पर स्वप्न का रहना सम्भव नहीं होता है। ''नींद उड़े रहे ना सुपना, और सुपने में देखना हक'' ''जागिये माहें सुपन''।

जब याद तुमें मैं आंऊगा, तबहीं बैठोगे जाग।

गए आए कहूं नहीं, सब रूहें बैठी अंग लाग।। खि. 13/37

जो याद आवे ए कदम की, तो तबहीं जावे उड़ देह।

कोई बन्ध पड़या फरेब का, आवे जरा न याद सनेह।। सिन. 25/10

बोए नेक आवे इन घर की , तो अंग निकसे आहे।

सो तबहीं ततखिन में , पिउ जी पे पोहोंचाए।। कि. 93/19

वास्तव में पूर्ण इश्क आना और निजस्वरूप की स्मृति आना दोनों एक साथ ही होता है, यहां उसकी मात्र कुछ बूंद लज्जत ही प्राप्त होती है

हुकम जो प्याला देवहीं, सो संजमें संजमें पिलाए।

पूरी मस्ती न हुकम देवहीं, जानें जिन कांच सीसा फूट जाए।।सिन24/83

''एही अपनी जागनी, जो याद आवे निजसुख।

इश्क याही सों आवहीं, याही सो होईये सनमुख।''

अर्थात् निजसुख की स्मृति से ही इश्क भी आता है और मूल मिलावे में राजजी के सम्मुख जागनी भी उसी से होता है।

इस्क जोस और इलम, ए हक हुकम के हाथ।
तब हक हैड़ा ना छूटहीं, ए सब सुख हैड़े साथ।। सिन 11/72

अर्थात् राजजी का पूर्ण जोश, इश्क, इल्म राजजी के हुकम के अनुसार समय के साथ प्राप्त होते हैं, जब ये प्राप्त हो जायेंगे तब राजजी की छाती की शोभा हमसे एक पल के लिये भी अलग नहीं होगी।

इस प्रकार उपरोक्त विश्लेषण से स्पष्ट हो जाता है कि वाणी से दिल अर्श है, हुकम आड़ा पट है, जिस कारण वाणी से इतना याद दिलाने पर भी निजघर की याद नहीं आती। इसका भी कारण है– हुकम इस खेल के माध्यम से अनेक सुख देना चाहता है, इसलिये इश्क में नहीं डूबा रहा। इस प्रकार दिल में प्रतिबिम्ब देखने, शरीर के दिल अंग में देखने के कथन की निरर्थकता भी सिद्ध हो जाती है, बल्कि वाणी के आधार पर क्षर अक्षर से परे परमधाम का चिंतन और चितवन करने की आवश्यकता दिखायी देती है, इसी के द्वारा निजस्वरूप की स्मृति सम्भव है।

आईये अब अगले विवेचनात्मक चौपाई की ओर बढ़ते हैं:–

6. ए जो मोमिन अक्स कहे, जानों आए दुनियां माहें।
हक अर्स कर बैठे दिल को, जुदे इत भी छोड़े नाहें।। सिन 21/82

इस चौपाई का अर्थ कई सुंदरसाथ इस प्रकार मानते हैं कि हमारे दिल में परमधाम व राजजी का प्रतिबिम्ब है, इसलिये दिल में देखो। जबकि चौपाई के तीसरे चरण ''अर्स कर बैठे' से स्पष्ट है कि पहले से नहीं थे बल्कि अब अर्श किया, वह सुंदरसाथ की आत्मिक स्थिति के अनुसार 'वाणी' से भी हो सकता है, और 'स्वरूप' से भी हो सकता है। इसका आत्मनिरीक्षण तो हमें खुद ही करना होगा। दिल में प्रतिबिम्ब देखने से इस चौपाई का दूर दूर तक कोई सम्बंध नहीं है। बल्कि वाणी में जो परमधाम की शोभा व राजश्यामाजी के श्रृंगार का वर्णन हुआ है, उससे सुंदरसाथ ने परमधाम व राजश्यामाजी को दिल में बसाया है।

बेसुमार जो फेर फेर कहिए, तो आवत नहीं हिरदे।
तो सब्द में ल्यावत, ज्यों दिल आवे मोमिनों के।। परि. 34/3

अर्थात् 'अनंत–अनंत' बार बार कहने से तो परमधाम की शोभा दिल में नहीं बस सकती इसलिये शब्दों और गिनती में उस शब्दातीत परमधाम का वर्णन किया गया है, ताकि उस परमधाम की शोभा मोमिनों के दिल में बस जाये।

अर्स कहिए दिल तिन का, जित है हक सहूर।
इलम इस्क दोऊ हक के, दोऊ हक रोसनी नूर।। सिन 24/42

अर्थात् उन सुंदरसाथ का दिल ही अर्श कहा जा सकता है, जिनके दिल में राजजी का ज्ञान, चिंतन व प्रेम हो।

सब गुझ तुमारे दिल का, जिन मेरा दिल किया रोसन।
जेता मता बीच अर्स के, सब आया दिल मोमिन।।सा 9/29
तो कह्या अर्स दिल मोमिन, हक बैठें उठें खेलाए।
सुख बका हक अर्स रूहें, सिफत क्यों कहे दिल जुबांए।।सा 9/30

अर्थात् परमधाम का सम्पूर्ण ज्ञान, यहां तक कि राजजी के दिल के गुह्य रहस्य भी वाणी के माध्यम से सुंदरसाथ के दिल में आ गये, अब हर पल चिंतन और चितवन के माध्यम से सुंदरसाथ को परमधाम, राजश्यामाजी का अनुभव हो रहा है। 'हक उठे बैठे खेलाए' 'तो कह्या' शब्द से स्पष्ट है कि ऐसी स्थिति आने पर ही सुंदरसाथ के दिल को अर्श कहा जायेगा।

(यहां ध्यान रखने योग्य ये बात है कि जोश (आवेश) द्वारा वाणी अवतरण महामति जी के तन से जिस प्रकार हुआ था, उस प्रकार अब छठे दिन की लीला में वाणी अवतरण नहीं होना है, बल्कि वाणी मंथन ही ज्ञान का एकमात्र स्रोत है, इतना जरूर है कि वाणी पढते समय राजजी का आवेश (जोश) वाणी समझने में हमारी सहायता करता है,, इसी को कहा है 'तुमें पढ़ावे आप खसम')

सोभा क्यों कहूं हक सूरत की, जाको नामै नूरजमाल।
ए दिल आए इस्क आवत, याको सहूरैं बदलें हाल।। सिन 20/91

अर्थात् राजजी के नूरी मुखारविंद की शोभा किस प्रकार बयान करूं, जिनका नाम ही नूर जमाल (अद्वितीय सौंदर्य) है। उनकी नूरी शोभा दिल में बसने पर इश्क आ जाता है, यही नहीं चिंतन मात्र करने से भी आत्मिक स्थिति बदल जाती है।

तो मोमिनों दिल अपना, जीवते अर्स केहेलाया।
जो इस्क मासूक के दिल का, ऊपर सरूपै देखें पाया।। सिन 20/104

अर्थात् इस प्रकार पल पल राजजी का चिंतन करने व स्वरूप दिल में बसने के कारण ही जीते जी मोमिनों का दिल अर्श कहलाया।

इस प्रकार हमें अपनी आत्मिक स्थिति का खुद ही निरीक्षण करना होगा। कि किस प्रकार हमारे दिल में राजजी आ गये हैं, वाणी के आधार पर परमधाम व राजश्यामा जी की धारणा लेकर ध्यान करने से ही सहीं माएने में दिल अर्श हो सकता है। आंख बंद करके बैठने मात्र से या दिल (हृदय चक्र) में देखने मात्र से परमधाम का अनुभव नहीं होने वाला।

आईये अब सिंधी ग्रंथ के प्रकरण 15, 16 के कुछ चौपाईयों की विवेचना करते हैं :–

7. सब मोमिनों को सौंपिया, कह्या मोमिन दिल अर्स।
देख आप दिल विचार के, दिल मोमिन अरस–परस।। सिंधी 15/21

अर्थात् सुंदरसाथ को तारतम ज्ञान के द्वारा सारा रहस्य बता (सौंप) दिया है, (इस कारण) उनके दिल को धाम कहा गया है। अपने दिल में विचार करके देखें तो आत्मा और परात्म का दिल अरस परस कहा गया है।

यहां अर्स दिल होने का भाव ही यह है कि मोमिनों के दिल में प्रियतम परब्रह्म की पूर्ण पहचान होती है, उनके दिल में ब्रह्मज्ञान के सम्पूर्ण रहस्य होते हैं, जो कि ''सब मोमिनों को सौंपिया' से भी स्पष्ट है।

पिछली चौपाईयों का अवलोकन करें तो ज्ञात होता है कि यहां भी हुकम, इलम, मैं खुदी, इश्क मांगना जैसे गहन विषयों पर विवेचना हो रही है। देखिये इसी प्रकरण की पिछली कुछ चौंपाईयां :–

आपन सोए हैं अर्समें, तले हक कदम।
ए जो खेल खेलावे खेलमें, कोई है बिना हक हुकम।। सिंधी 15/6
इत हुकम एक हक का, और हकै का इलम।
हुकम इलम या खेल को, देखो सोइयां तले कदम।। सिंधी 15/7
ए खेल हुकम इलम का, हमें नींदमें देखावत।
करने हांसी अर्स में, खेल में भुलावत।। सिंधी 15/10

(अरस परस होने से भी यही भाव है कि मोमिनों का असल तन परमधाम में राजजी के चरणों में है, और दिल स्वप्नमय जगत को देख रहा है, परात्म के दिल में स्वप्न चल रहा है, और स्वप्न तन के दिल में भी वाणी के द्वारा परमधाम का सारा ज्ञान आ गया है।

यों असल खेल की है नहीं, ए तो दिल में देखाई देत।
किया हुकमें महंमद रूहों देखने, तो भिस्त में इनों को लेत।। सिन26/26

अर्थात् यह खेल अस्तित्व हीन है, ये मात्र परात्म के दिल में दिखाई दे रहा है।

''मोमिन असल तन अर्स में, और दिल ख्वाब देखत।
असल तन इन दिल से, एक जरा न तफावत।।'' सिनगार 6/25

अर्थात् सुंदरसाथ का असल तन परमधाम में है, और दिल ख्वाब देख रहा है, इस दिल और मूल तन में जरा भी अंतर (दूरी) नहीं है।

दिल मोमिन अर्स तन बीच में, उन दिल बीच ए दिल।
केहेने को ए दिल है, है अर्सै दिल असल।। सिन 26/14

अर्थात् हकीकत में परात्म के दिल का ही अस्तित्व है, स्वप्न तन व उसका दिल तो स्वप्न के साथ ही असल दिल में लीन हो जाते हैं।(हम सेहेरग से भी नजदीक मूल मिलावे में बैठे हैं।)

उपरोक्त चौपाई के तीसरे चरण '**देख आप दिल विचार के**' में 'देखने' शब्द से तात्पर्य वाणी के द्वारा चिंतन करके निष्कर्ष निकालने से है, जो कि 'दिल विचार के' शब्दों से भी स्पष्ट है, वाणी में भी कई अन्य जगहों पर कहा है कि

हम उतरें चढ़ें तो खेल में, जो जरा दूसरा होए।
ऐ देखो हक इलम से, अरस अरवा ना उरझे कोए।। सनंध 39/69

इस चौपाई में भी हक इलम से देखने (चिंतन करने) कहा जा रहा है।

प्रीतम मेरे प्रान के, आतम के आधार।
ए दिल भीतर देखियो, है अति बड़ो विस्तार।।सनंध 42/1

इस चौपाई में महामति जी तफ्सीरे हुसैनी सुनने के बाद अत्यंत प्रसन्न होकर दिल्ली से उदयपुर, सूरत में सुंदरसाथ को छोटी पत्री लिख रहे हैं कि कुर्आन पाक में हमारी ही सारी बातें लिखी हैं, इसे अपने दिल में गहराई विचार के देखिये, इसमें बहुत ही रहस्य छिपा है। **''ऐसी खबर दई महंमदे, सैयां सुन दौड़ियो सब'2 ''महंमद पाती के वचन, सुनियो भीम मकुंद।4,''**

इसके बावजूद कई सुंदरसाथ इसका अर्थ ''दिल में प्रतिबिम्ब देखने या शरीर के दिल अंग में देखने'' से घटाते हैं जबकि यहां वाणी के आधार पर चिंतन व चितवन करने की बात कही जा रही है। सामान्य बोलचाल की भाषा में 'दिल में देखो' कह दिया जाता है जिसका अर्थ दिल में मनन–चिंतन करने से भी होता है, दिल में स्मरण करने से भी होता है, वाणी आधारित धारणा–ध्यान करने से भी होता है। लेकिन शरीर के दिल अंग में देखने या दिल में प्रतिबिम्ब देखने की बात सर्वथा निरर्थक है। आत्मा का दिल कहें तो भी संशय यह है कि आत्मा का दिल कौन सा हिस्सा है जहां देखें। धारणा तो क्षर अक्षर से परे मूल मिलावे का ही लिया जाता है। परमधाम के ज्ञान का सारा खजाना सौंप दिया राजजी ने, तो फिर वाणी का मंथन, चिंतन व चितवन करना ही सुंदरसाथ का कर्तव्य है। निराकारवादी परब्रह्म का स्वरूप ना मानने के कारण हृदय में ध्यान करने कहते हैं क्योंकि वे हृदय में परमात्मा का वास मानते हैं। हृदय में जीव की ज्योति को परमात्मा मानकर उसका ध्यान करते हैं। यदि वाणी आधारित परमधाम का धारणा व ध्यान करना है तो दिल में देखने के कथन का क्या औचित्य ? दिल में देखना है तो वाणी आधारित परमधाम व युगल स्वरूप की धारणा का क्या मतलब ? इस प्रकार तो शरीर का विस्मरण कैसे हो पायेगा?

आईये इस प्रकरण की अगली चौपाई देखते हैं

8. दिल मोमिन का अर्स है, जो देखे अर्स मोमिन।
हक चाहें बैठाया अर्स में, तो तेरे आगे ही नहीं ए तन।। सिंधी 15/22

अर्थात् मोमिनों का दिल अर्श कहा है (उनके दिल में धनी की पूरी पहचान, एवं तारतम ज्ञान होता है) यदि वे विचार करके देखें तो पायेंगे कि यदि राजजी आपकी फरामोशी दूर कर के जागृत कर दें, तो ये स्वप्नजगत और स्वप्नतन रहेगा ही नहीं।

इस चौपाई में भी 'देखे' शब्द का अर्थ चिंतन करके निष्कर्ष निकालने से है। जो कि ''जो देखें अर्स मोमिन'' से स्पष्ट है, वाणी में भी कई जगह इसी प्रकार सामान्य बोलचाल की भाषा में कहा गया है :–

देख देख मैं देखया, ए सब करत हक हुकम।
ना तो अर्स दिल एता मता लेय के, खिन रहे न बिना कदम।।सि. 24/71

अर्थात् पुनः पुनः विचार करते हुए मैं इस निष्कर्ष पर पहुंचा हूं कि जो कुछ भी हो रहा है, वह हुकम कर रहा है यानि राजजी के दिल की इच्छा के अनुसार हो रहा है, नहीं तो दिल में इतना ज्ञान आने के बाद भी हम उनके बिना नहीं रह सकते थे।

यहां यह तथ्य विचारणीय है कि आखिर क्यूं ऐसा कहा जा रहा है कि ''**हक चाहें बैठाया अर्स में, तो तेरे आगे ही नहीं ए तन।''** अर्थात् ''यदि राजजी परमधाम में जागृत कर दें तो स्वप्न तन का अस्तित्व ही नहीं रहेगा।'' इस चौपाई में निहित आशय को समझने के लिये हमें इस प्रकरण की पूर्व की चौपाईयों का भी अवलोकन करना पड़ेगा,

ए खेल हुकम इलम का, हमें नींदमें देखावत।
करने हांसी अर्स में, खेल में भुलावत।। सिंधी 15/10
इत दूसरा कोई कहूं नहीं, सब देख्या हुकम इलम।
जो ए उड़े नाबूद हुकमें, तो देखो बैठे आगे खसम।। सिंधी 15/11
हकें द्वार दिया हाथ अपने, और दई इलम पूरी पेहेचान।
तो क्यों सहें आड़ा पट, क्यों न खोलें द्वार सुभान।। सिंधी 15/12
इस्क मांगूं तो भी गुना, और खुदी ए भी गुनाह होए।
जो देखों हुकम इलम को, मोहे बांध लई बिध दोए।। सिंधी 15/17
इत खुदी न गुनाह किन सिर, या ढांप खोल तेरे हाथ।
देख खावंद या खेल को, हुकम इलम तेरे साथ।। सिंधी 15/20

यहां सुंदरसाथ की एक प्रकार की व्याकुलता की स्थिति है, कि परमधाम क्यूं नहीं दिखता, घर कब जायेंगे/मूल मिलावे में कब जागृत होंगे। हुकम की राह देखते हैं तो भी गुनाह लगता है, इश्क मांगती हूं तो भी गुनाह लगता है, बिना हुकम के जोर (प्रयास) लगाती हूं, तो भी खुदी के गुनाह का डर है।

राजजी उन्हें समझा रहे हैं कि ये खेल तो हुकम इलम का है, इलम से दिल अर्श होने के बाद भी हुकम आड़ा होकर निजघर की पूर्ण स्मृति आने नहीं देता है, क्योंकि पूर्ण स्मृति आ जाये तो खेल ही खत्म हो जायेगा, और हुकम हमें खेल के माध्यम से अनेक प्रकार के सुख देना चाहता है, हम तो मूल मिलावें में पहले ही बैठे हुए हैं, ये संसार स्वप्नवत दिल में देख रहे हैं, यहां कोई आया ही नहीं है, ना ही जाना है, इसलिये राजजी के हुकम को शिरोधार्य करते हुए, राजजी की कृपा का आश्रय लेकर वाणी के आधार पर चिंतन व चितवन करते रहें, राजजी की कृपा से जो होगा, अच्छा ही होगा।

9. महामत कहे ए मोमिनों, हकें हांसी करी पूरन।
देख खावंद या खेल को, ए कुंजी तेरा दिल मोमिन।।सिंधी 15/23

अर्थात् महामति जी कह रही हैं कि राजजी ने बहुत हांसी की लीला की है, अब आपकी जैसी इच्छा, चाहे खेल को देखो या खावंद को, तुम्हारा दिल ही कुंजी है।

यहां हंसी इस बात की है कि वाणी द्वारा हमारे दिल में पूरा परमधाम भी बसा दिया, हम जागृत की सारी बातें भी कह रहे हैं, लेकिन हुकम के आड़ा होने से इश्क नहीं आता। यहां ''देख खावंद या खेल को'' से मतलब आंखों से देखने से नहीं है, बल्कि लक्ष्य लेने से है; यहां सुंदरसाथ की जिस स्थिति में (पन्नाजी) यह सिंधी की वाणी उतरी है, उसमें दुनिया के सुखों को देखने का तो सवाल ही नहीं उठता, माया को देखने के लिये वाणी में भला क्यूं कहा जायेगा।

यहां भाव है कि तुम्हारें दिल में तारतम ज्ञान रूपी कुंजी का सारा खजाना सौंप दिया हैं, (''सब मोमिनों को सौंपिया'') उसके आधार पर तुम स्वयं निश्चय करो कि तुम्हे क्या करना है यानि चितवनी में डूबे रहें या निष्काम भाव से अपना कर्तव्य कर्म (सेवा–जागनी कार्य) आदि करते रहें, परंतु अपनी सुरता को परमधाम में ही लगाये रखें क्योंकि अंततः हमें जाना (जागना) तो परमधाम में ही है।

इसी बात को वेदों में इस प्रकार कहा है ''न तो अपने जीवन में आनंद और न अपने मृत्यु में दुःख माने। किंतु जैसे क्षुद्र भृत्य अपने स्वामी की आज्ञा की बाट जोहता रहता है। वैसे ही काल और मृत्यु की प्रतिक्षा करता रहे। निस्पष्ह– निष्काम, आसक्ति रहित होकर कर्तव्यकर्म करता रहे।

10. ताला द्वार न कुंजी खोलना, समझाए दई सबों आप।
दिल अपने में हक बसें, ज्यों जाने त्यों कर मिलाप।। सिंधी 16/1

ब्रह्मवाणी के रूप में (हक इलम से) राजजी हमारे दिल में बस गये हैं, हमें सब तरह से समझा दिया है कि हम मूल मिलावे में ही राजजी के चरणों में बैठे हैं, ये संसार स्वप्नवत् है जो कि हम दिल में देख रहे हैं, यहां राजजी की इच्छा के अनुसार ही सब हो रहा है, किसी प्रकार का ना कोई बंधन है, ना इससे छूटने के लिये किसी प्रकार का यत्न करने की आवश्यकता है, (ना ताला ना कुंजी खोलना) बल्कि हर पल मात्र यही याद करो कि हम मूल मिलावे में ही राजजी के चरणों में बैठे हैं। ''सूरता एकै राखिये, मूल मिलावे माहें''

यहां संशय होता है कि जब पहले से ही दिल में विराजमान हैं, तो मिलाप किससे करने कहा जा रहा है? वास्तव में यहां ये भाव है कि ज्ञान के रूप में तो राजजी दिल में बसे हैं किंतु स्वरूप बसाना बाकि है। दिल में प्रतिबिम्ब देखने और शरीर के दिल अंग में देखने के कथन का इस चौपाई से कोई मतलब नहीं है।

सेहेरग से नजीक, आड़ा पट न द्वार।
खोली आंखें समझ कीं, देखती न देखे भरतार।। सिंधी 16/2

अर्थात् हम सेहेरग से भी नजदीक मूल मिलावे में राजजी के चरणों में विराजमान हैं, ये दृश्यमान जगत व स्वप्न वजूद तो मात्र माया का भ्रम है, तारतम ज्ञान पाने के बाद हम इतनी सी बात क्यूं नहीं समझ पा रहे। (यहां देखने से तात्पर्य समझने से लिया जायेगा, जो कि ''खोली आंखें समझ की'' से स्पष्ट है। अर्थात् समझ की आंखों को खोलने के बाद भी हम क्यूं नहीं समझ पा रहे। दिल में देखने का यहां कोई प्रसंग ही नहीं है, इसके बाद की चौपाईयों में हुकम का वर्णन शुरू हो जाता है कि यहां सब कुछ हुकम ही है, रूहें यहां नहीं आयी हैं। इस प्रकार आगे की चौपाईयों से मिलान हो जाता है कि ये संसार अस्तित्वहीन, स्वप्नवत है, हम मूल मिलावे में ही राजजी के चरणों में बैठे हैं।

हुकम इलम खेल एकै, और कोई न कहूं दम।
इत रूह न कोई रूहन की, जो कछू होए सो हुकम।।३।।
अपनी सुरतें हुकम, खेलावत हुकम।
खेलत सामी हुकमें, ए देखावत तले कदम।।४।।

इस चौपाई में ''ए देखावत तले कदम'' से पूर्णतया स्पष्ट हो जाता है कि सेहेरग से नजीक का अर्थ वहीं मूल मिलावे में बैठै बैठे खेल देखने से है। आगे कुछ और चौपाईयां प्रमाण के रूप में देखते हैं।

हक बिना जो कछु कहे, सो होवे मुसरक।
और जरा नहीं कहूं कितहूं , यों कहे इलम हक।।मा सा 17/58

अर्थात् परमात्मा के सिवा किसी दूसरे वस्तु की अनादि सत्ता मानता है वह मुसरक (बहुदेववादी, काफिर) है, । उसके सिवा कुछ भी सत्य नहीं है, सब नाशवान है। ऐसा तारतम ज्ञान कहता है।

हक हकीकत मारफत, रूहें इस्के राह लई जाए।
सो बिन चले पाउं हक बका, दई सेहेरग से नजीक बताए।। मा सा 4/93

अर्थात् हकीकत व मारफत का ज्ञान होने के पश्चात् परमधाम में बैठे होने व राजजी के ही अंगरूपा आत्मायें होने की पहचान होती है। और पता चलता है कि ये संसार स्वप्नवत है, हम वहीं मूलमिलावे में राजजी के चरणों में बैठे हैं, तो चलने (परमधाम को पाने के लिये यत्न करने) की भी जरूरत नहीं रहती यानि मात्र निजस्वरूप को याद करने की जरूरत रहती है।

(यहां 'बिन चले पाऊं'' शब्द ''आड़ो पट न द्वार'' से समान अर्थ रखता है।)

आईये अब अगले विवेचनात्मक चौपाई की ओर चलते हैं।

11. तुमें अर्स देखाया दिल में, जो खोलो ले कुंजी सहूर।
कुलफ फरामोसी ना रहे, अर्स दिल हक हजूर।। खिलवत 15/73

अर्थात् तुम्हें परमधाम दिल में दिखा दिया है, जो तारतम कुंजी का मंथन व चिंतन करो तो जरा भी संशय नहीं रहेगा कि अर्स दिल मोमिन मूलमिलावे में राजजी के चरणों में विराजमान हैं।

यहां यदि ऐसा अर्थ लेंगे कि ''दिल में दिखाया'' यानि दिल में परमधाम दिखा दिया, तो सवाल उठता है कि किसे दिखाया, यदि दिखा ही दिया तो यहां तारतम ज्ञान रूपी कुंजी खोलकर देखने क्यूं कहा जा रहा है, इस चौपाई का वास्तविक आशय ये है कि तारतम वाणी के द्वारा आपके दिल में पूरे परमधाम की शोभा को बसा दिया (समझा दिया), अब इस तारतम ज्ञान के आधार पर उसका चिंतन करें तो जरा भी संशय नहीं रहा कि हम मूल मिलावे में राजजी के चरणों में बैठे हैं। इस चौपाई की पूर्व की चौपाईयों से भी यह स्पष्ट हो जाता है।

बाहेर तो ना जाए सको, छेह न आवे जिमी इन।
एक जरा जुदा न होए सके, तुमें ठौर न बका बिन।। खिलवत 15/71

अर्थात् परमधाम से हम बाहर जा ही नहीं सकते क्योंकि परमधाम तो अनंत है, इसका कोई किनारा/अंत ही नहीं है। अर्श की एक कंकरी भी उससे अलग नहीं हो सकती।

हक संदेसे लेत हो, कौन तरफ तुमसों हक।
आया इलम खुदाई तुम पे, तिनमें जरा न सक।। खिलवत 15/72

अर्थात् राजजी की प्रेरणा हम अपने दिल में प्राप्त करते रहते हैं, जरा विचार करो कि राजजी हमारे किस तरफ हैं और हम राजजी के किस तरफ हैं, खुदाई इल्म तुम्हे दिया गया है, जिसमें जरा भी संशय नही है।

वास्तव में हम राजजी के चरणों में ही बैठे हुए हैं, और ये सारा स्वप्नमयी जगत भी दिल में ही चल रहा है, **"अर्श दिल हक हजूर"** का कथन भी इसी ओर संकेत करता है। इस तथ्य को वाणी में कई जगह दर्शाया गया है :–

"सुपन होत दिल भीतर, रूह कहूं ना निकसत।
ए चौदे तबक जरा नहीं, ऐ तो दिल में बड़ा देखत।।"
यों असल खेल की है नहीं, ए तो दिल में देखाई देत।
किया हुकमें महंमद रूहों देखने, तो भिस्त में इनों को लेत।। सिन26/26

इस प्रकार इस मायावी जगत का अखण्ड स्वरूप नहीं है। यह तो आत्माओं के दिल में दिखायी भर दे रहा है।

ज्ञान के द्वारा दिल में परमधाम बसाने का प्रमाण देखियेः–

इत आंखें चाहिए हक इलम की, तो हक देखिये नैना बातन।
नैना बातून खुले हम इलमें, ए सहूर है बीच मोमिन।। सिन 23/109

अर्थात् यहां ज्ञान की दृष्टि चाहिए, तब हम बातिनी दृष्टि से राजजी की पहचान कर सकते हैं, ऐसी बातिनी ज्ञान की दृष्टि मात्र सुंदरसाथ के पास ही होती है।

ए सब विध दिल देखत, करे जुबां अकल बरनन।
तो भी अरवा ना उड़ी, कोई सखत अंतस्करन।। सिन 22/35

अर्थात् ज्ञान दृष्टि से हमारा दिल सब समझ रहा है, जुबां व अक्ल अपने सामर्थ्य के अनुसार उसका वर्णन भी कर रहे हैं, किंतु फिर भी निजस्वरूप की स्मृति नहीं आती जिसके कारण स्वप्न खत्म नही होता।

वास्तव में हमारी स्थिति ऐसी है कि हमारा दिल तो ज्ञान दृष्टि से परमधाम देख रहा है लेकिन आत्मिक दृष्टि नहीं देख पा रही है, इसलिये वाणी में कहा गया है :–

पोहोंचे नहीं दिल अंग के, ताथें रूह अंग लीजे जगाए।
तोलों आपा ना मरे, जोलों खुदी न देवे उड़ाए।। छो. क. 1/40

अर्थात् दिल का ज्ञान परात्म तक नहीं पहुंच रहा इसलिये रूह को जागृत करना होगा।

ज्यों सूरत दिल देखत, त्यों रूह जो देखे सूरत।
बेर नहीं रूह लज्जत, तेरे अंग जात निसबत।। सिन 22/80

अर्थात् जिस प्रकार दिल ज्ञान दृष्टि से राजजी का स्वरूप देख रहा है, उस प्रकार हमारी आत्मा भी यदि राज जी का स्वरूप देखने लगे तो लज्जत आने में एक पल की भी देरी नहीं लगेगी।

दिलडा असां जा जागया, पण पुजे ना रूहसी।

से हुकम हथ आंहिजे, हल्ले न असां जो कीं।। सिंधी 9/15

आपके तारतम ज्ञान से हमारा दिल तो जाग गया है, किन्तु यह ज्ञान हमारी आत्मा तक नहीं पहुँचा।

हम उतरें चढ़ें तो खेल में, जो जरा दूसरा होए।

ऐ देखो हक इलम से, अरस अरवा ना उरझे कोए।।सनद 39/69

अर्थात् सुंदरसाथ जी, ज्ञान दृष्टि से देखिये, हम तो मूल मिलावे में ही विराजमान हैं, परमधाम सीमित हो और इसके सिवा कोई और अखण्ड स्थान हो, तब तो आने जाने का सवाल उठता है।

सब सोभा देखों निज नजर, अपना वतन निज घर।

धनी केहे केहे चित चढ़ाई, पर नैनों अजूं न देखाई।।परि. 3/7

अर्थात् धनी देवचंद्र जी ने परमधाम की शोभा वर्णन कर करके मेरे चित्त में तो बसा दिया है लेकिन आत्मिक दृष्टि से अब तक नहीं देख पाया है।

हिसाब बीच ल्याए बिना, हक आवें नहीं दिल माहें।

हक देत लदुन्नी मेहेर कर, हक अर्स आवे बीच जुबांए।।५।। परि. 34

अर्थात् शब्दों में व हिसाब में ल्याये बिना परमधाम व राजजी की शोभा दिल में नहीं आ सकती थी, इसलिये राजजी ने कृपा करके तारतम ज्ञान हमें प्रदान किया, जिससे परमधाम व राजजी की शोभा हमारे दिल में आ सकी।

अर्स नाहीं सुमार में, सो हक ल्याए माहें दिल मोमिन।

बेसुमार ल्याए सुमार में, माहें आवने दिल रूहन।।५७।। सा 1

अर्थात् परमधाम की शोभा अनंत–बेशुमार है, उसे राजजी ने शब्दों में व शुमार में लाकर सुंदरसाथ के दिल में बसा दिया।

इस प्रकार दिल में दिखाने का भाव स्पष्ट हो जाता है कि ज्ञान दृष्टि से शोभा दिल में बसा दिया है। जब तारतम ज्ञान के आधार पर चिंतन (सहूर) व चितवन किया जायेगा तो हम पायेंगे कि हम तो मूल मिलावे में ही राजजी के चरणों में बैठे हैं। इस प्रकार हम अपनी परात्म सहित युगल स्वरूप का दर्शन भी कर पायेंगे।

आईये अब अगले विवेचनात्मक चौंपाई की विवेचना करते हैं।

12. सो हादी देखावत जाहेर, अरस खुदा का जे।
चौदे लोकों चारों तरफों, सेहेरग से नजीक ए।। खु. प्र. 9/34

इसका जाहेरी अर्थ लेने पर ऐसा प्रतीत होता है जैसे राजजी चारों तरफों चौदह लोकों के कण कण में सेहेरग से नजदीक हैं जबकि इसका वास्तविक आशय ये है कि ये पूरा संसार स्वप्नवत् है, और आत्माऐं दिल में इसे देख रही हैं। इस प्रकार स्वप्न जगत और परमधाम के बीच जरा भी दूरी नहीं है, परमधाम, इस स्वप्नमयी जगत से सेहेरग से भी नजदीक है। सामान्य रूप से देखा भी जाता है कि स्वप्न तो हमारे दिल में ही चलता है। हम कहीं बाहर नहीं जाते हैं। जाहेरी अर्थ लेंगे तो चारों तरफों अर्थात् कण कण में तो राजजी हो ही नहीं सकते। कण कण में तो मात्र ब्रत्तसत्ता है।

रूह तन की असल अर्स में, अर्स ख्वाब नहीं तफावत।
तो कह्या सेहेरग से नजीक, हक अर्स दुनी बीच इत।। सिन 26/13

अर्थात् आत्माओं के मूल तन परमधाम में हैं, और यह स्वप्न जगत, दिल में ही दिखायी दे रहा है, इसलिये राजजी व परमधाम को यहां ख्वाब जगत से भी सेहेरग से नजदीक कहा जाता है। अर्श और स्वप्न जगत में जरा भी दूरी नहीं है।

दिल मोमिन अर्स तन बीच में, उन दिल बीच ए दिल।
केहेने को ए दिल है, है अर्सै दिल असल।। सिन 26/14

अर्थात् हमारा दिल तो अर्स तन (परात्म) के अंदर ही है, मूल तन के दिल में ही स्वप्न, स्वप्न तन और उसका दिल होता है। ये स्वप्न तन का दिल तो मात्र कहने की बात है, वास्तव में जाग्रत का दिल ही स्वप्न में जाता है, और स्वप्न वजूद धारण करता है। इसलिये परात्म के दिल को ही सत्य माना जाता है।

नकलें असलें जुदागी, एक जरा है आड़ा पट।
कह्या सेहेरग से नजीक, तिन निपट है निकट।। सिन 21/91

असली तन व स्वप्न तन के बीच मात्र नींद का पर्दा होता है। ख्वाब तो दिल में ही होता है, इसलिये परमधाम को हमारे सेहेरग से भी अत्यंत नजदीक कहा है।

सुपन होत दिल भीतर, रूह कहूं ना निकसत।
ए चौदे तबक जरा नहीं, ए तो दिल में बड़ा देखत।।सिन 11/80

स्वप्न, हमारे दिल के भीतर ही चल रहा है, हमारी आत्मा परमधाम से कहीं बाहर नहीं गयी है। इस चौदे लोक का जरा भी अस्तित्व नहीं है, यह तो दिल में ही बहुत बड़ा दिखायी दे रहा है।

हक इलमें ए पिंड देखिए , ए पिंड बीच अर्स तन।

एक जरा जुदागी ना रही, अर्स वाहेदत बीच वतन।।सिन 27/37

अर्थात् तारतम ज्ञान की रोशनी में इस स्वप्न तन की हकीकत देखिये, यह स्वप्न तन भी परात्म के अंदर (दिल में) ही है। इस प्रकार परात्म व स्वप्न तन के बीच जरा भी जुदागी नहीं रही। (चौपाई में 'ए पिण्ड' शब्द प्रयुक्त हुआ है ना कि ''इन पिण्ड बीच'' शब्द। 'ए पिण्ड' शब्द का अर्थ होता है – 'यह पिण्ड'। वैसे भी स्वप्न तन के अंदर मूल तन नहीं होता, मूल तन के भीतर ही स्वप्न, स्वप्न तन एवं स्वप्न तन का दिल सब रहता है। और देखने का तो यहां कोई प्रसंग ही नहीं है। ''सुपन होत दिल भीतर'' ''उन दिल बीच ए दिल'')

इस प्रकार ख्वाब जगत के सेहेरग से भी नजदीक परमधाम होने का भाव स्पष्ट हो जाता है। वाणी व धर्म ग्रंथों में सर्वत्र परब्रह्म का मूल स्वरूप इस नश्वर जगत से परे ही बताया है।

हुकमें देत दिखाई, कुदरत पसारा।

ए देखत सब पैदा फना, हक न्यारे से न्यारा।। मा सा 17/59

अर्थात् यह सम्पूर्ण क्षर जगत नाशवान है, परब्रह्म का स्वरूप इसके पार के भी पार विद्यमान है।

नेत नेत कर तो गाया, जो ब्रह्म न नजरों आया।

जित देखो तित माया, तब नाम निगम धराया।। खुलासा 11/9

ब्रह्म नहीं मिने संसार, मन वाचा रही इत हार।

ढूंढया कईयों कई प्रकार, पर चल्या न आगे विचार।। खुलासा 11/10

अर्थात् इस नश्वर जगत के अंदर परब्रह्म नहीं है। सभी खोज खोज कर हार गये।

सात हजार राह फरिस्ते, करी इसारत दुनी कयामते।

अब खुदाए ने यों कर कह्या, मैं आसमान जिमी से जुदा रह्या।।63

जेती कोई पैदाईस कुंन, मोको तिनथे जानो भिन्न।

मैं ना इनमें ना इनके संग, बेसुध कहे सब इनके अंग।। 64

मेरे इनसों नाहीं मिलाप, मैं बेखबरों में नहीं आप।

मैं इनों सों नहीं गाफिल, ए दुख सुख में रहे मिल।। 65 ब.क.8

इस प्रकार स्पष्ट हो जाता है कि परमात्मा संसार के कण कण में नहीं है बल्कि मात्र उसकी ब्रह्मसत्ता है।

अब अगली विवेचनात्मक चौपाई की ओर बढ़ते हैं।

13. जाहेर बाहेर बातून, अंतर अंदर तुम।
कहूं जरे जेती जाएगा, नहीं खाली बिना खसम।। खिलवत 2/3

इस चौपाई का जाहेरी अर्थ इस प्रकार प्रतीत होता है कि इस संसार में बाहर, भीतर, अंतर (आत्मा में), कण कण में परब्रह्म अक्षरातीत विद्यमान हैं। जबकि इस चौपाई के बाद की दो चौपाई देखने पर ही यह भ्रम दूर हो जाता है।

सब ठौरों सुध तुमको, कछु छूट ना तुम इलम।
ए सक मेट बेसक तुम करी, कछु ना बिना खसम।। खिलवत 2/4

अर्थात् कण कण की आपको जानकारी है, आप सर्वज्ञ हैं, ऐसा कुछ भी नहीं कि जो आपके ज्ञान में ना हो, यह संशय मिटा कर आपने निश्चित कर दिया कि आपके बिना कुछ भी नहीं है।

जरा न हुकम सुध बिना, सबन के दम दम।
साइत न खाली पाईये, बिना हुकम खसम।। खिलवत 2/5।।

अर्थात् आपके हुकम (ब्रह्मसत्ता) को सारी जानकारी है, कुछ भी उसकी जानकारी के बाहर नहीं है। कण कण में आपकी ब्रह्मसत्ता है। पल पल की आपको जानकारी है।

इस प्रकार स्पष्ट है कि परब्रह्म को तो जर्रे जर्रे की जानकारी होती है, बाहर, भीतर, और सबके दिल की जानकारी होती है। यह सब जानकारी लेने के लिये उसको कण कण में आना नहीं पड़ता बल्कि उसकी सत्ता सर्वत्र व्याप्त है, जिससे सब कुछ वह जानता है और सब कुछ उसके नियंत्रण में भी रहता है।

"खुदाय देखता है सबन, और जानता है सबन के मन।।" ब. क.
"जो यामें ब्रह्मसत्ता ना होती, तो अधखिण रहने ना पावे।।"किरंतन

आईये अब मारफत सागर के प्रकरण 4 में से कुछ चौपाईयों पर चर्चा करते हैं :–

14. बखत महंमद के उठने, और आवें अस्हाब।
तब सो खोले मुसाफ को, पोहोंचे लग कोसे नकाब।।मा सा 4/56

अर्थात् आखिरत के समय महंमद साहब व उनके भाई मोमिन जब दुनिया में आयेंगे तब वे कुर्आन के बातिनी रहस्यों को खोलेंगे।

कह्या हक सेहेरग से नजीक, सो हक अरस दिल मोमिन।
ना ऊपर तले दायें बायें, ए बतावें मुरसद कामिल।। मा सा 4/58

अर्थात् (कुर्आन पाक में) खुदा को सेहेरग से भी नजदीक कहा है, (जिसका रहस्य कोई नहीं जान सका) उस खुदा का अर्स मोमिनों का दिल कहा गया है, ऊपर तले ना दायें बायें। ऐसा काजी मौलवी बताते हैं।

(यहां मुख्य रूप से खुदा के सेहेरग से नजदीक होने का विषय चल रहा है, जिसके विषय में कुर्आन में बयान किया गया है, लेकिन दुनिया वाले सेहेरग से नजदीक का रहस्य आज तक नहीं समझ सके, वे यह समझते हैं कि खुदा दुनिया के सेहेरग से नजदीक है, किंतु इस रहस्य को जब आखिरत में महंमद साहब और अर्श दिल मोमिन इल्मे लदुन्नी लेकर आयेंगे, तब वे ही स्पष्ट करेंगे, इस प्रकरण के आगे की चौपाईयों से यह स्पष्ट हो जाता है।)

जब पट अपने मोंह से, किया मुसाफें दूर।
तब नूर बका जाहेर हुआ, और तजल्ला नूर।। मा सा 4/59

अर्थात् जब कुर्आन पाक ने अपने मूंह से पर्दा दूर किया, तब नूरी परमधाम एवं अक्षरातीत परब्रह्म के स्वरूप से संबंधित रहस्य स्पष्ट हुआ।

हक नजीक सेहेरग से, पर तरफ ना पावे कोए।
ढूंढया अव्वल से अब लग, पर किन बका ना रोशन होए।। मा सा 4/62

अर्थात् खुदा को सेहेरग से नजदीक कहा गया है, लेकिन दुनिया वाले उसकी दिशा भी नहीं पा सके। सृष्टि के प्रारम्भ से अब तक अनेकों ने खोज किया लेकिन कोई भी उस अखण्ड परमधाम का ज्ञान प्राप्त नहीं कर सका।

सब सय फना कही, क्यों बका कह्या ढिग तिन।
जिमी बका अरस ढिग फना, ए सक सुभे रही सबन।। मा सा 4/63

अर्थात् सबके मन में संशय बना रहा कि आखिर अखण्ड परमधाम उनके नजदीक कैसे हो सकता है। ये सम्पूर्ण जगत तो नाशवान है फिर अखण्ड परमधाम उसके सेहेरग से भी नजदीक कैसे हो सकता है।

कहे मोमिन नूर सूरत में, जो बीच अर्स हमेसगी।
एक तन मोमिन अर्स में, दूजी सूरत सुपन की।। मा सा 4/78

अर्थात् मोमिनों का नूरी स्वरूप अखण्ड परमधाम में विराजमान कहा गया है, उनका एक तन (परात्म) अर्स में है, और दूसरा स्वप्न तन खेल में।

तो कहे सेहेरग से नजीक, खासलखास बंदे हक के।
किए अर्स तन से रूबरू, जो नूर बिलंद से उतरे।। मा सा 4/79

इसी कारण तो उन्हें खुदा के सेहेरग से नजदीक कहा गया है, (क्योंकि उनके मूल तन परमधाम में हैं), और खासल खास बंदे कहा है। यहां उन्हें परब्रह्म अक्षरातीत ने तारतम ज्ञान से पहचान कराया कि उनके मूल तन परमधाम में मूल मिलावे में राजजी के चरणों में सेहेरग से भी नजदीक विराजमान हैं।

जाकी न असल अर्स में, सो सेहेरग से नजीक क्यों होए।
वह फना बका को क्यों मिले, वाकी अकल में न आवे सोए।। मा सा 4/80

अर्थात् जिसका असल तन परमधाम में नहीं है, वह सेहेरग से नजदीक कैसे हो सकता है, स्वप्न के जीव अखण्ड परमधाम में कैसे जा सकते हैं।

हके कह्या छबीसमें सिपारे, मैं मेरे बंदो से अकरब।
वे मोमिन एक तन अर्स में, ताए सेहेरग से नजीक रब।। मा सा 4/81

अर्थात् कुर्आन के 26वे सिपारे में खुदा तआला ने फरमाया है कि मैं अपने खासल खास बंदों से दूर नहीं हूं, उन मोमिनों के नूरी तन परमधाम में हैं, वहां हक माशूक उन मोमिनों के सेहेरग से भी नजदीक है।

रूबरू होना अर्स तन से, इन फना वजूद नासूत।
नजीक न होए बिना अर्स तन, नूर लाहूत परे हाहूत।। मा सा 4/82

अर्थात् नूरी मूल मिलावे में सेहेरग से भी नजदीक अर्स तन से ही हुआ जा सकता है, इस नासूती नश्वर तनों से नहीं। वह नूरी मूल मिलावा नूरी परमधाम में है।

(यहां बिल्कूल स्पष्ट हो जाता है कि राजजी हमारी परात्म के सेहेरग से भी नजदीक हैं)

दुनी असल जिनों तारीकी, सो इलमें करो पेहेचान।
ताको नजीक सेहेरग से, खाली हवा ला मकान।। मा सा 4/83

अर्थात् दुनिया जो कि निराकार–महाशुन्य से पैदा हुयी है, उनके सेहेरग से नजदीक तो निराकार–क्षर पुरूष है। यह तारतम ज्ञान से पहचान कीजिये।

हक हकीकत मारफत, रूहें इस्के राह लई जाए।
सो बिन चले पाउं हक बका, दई सेहेरग से नजीक बताए।। मा सा 4/93

अर्थात् आत्माओं के पास हकीकत व मारिफत का ज्ञान होता है, इसलिये वे इश्क का रास्ता अपनाती हैं, इस प्रकार परमधाम में राजजी के चरणों में विराजमान मूल तनों (परात्म) का ज्ञान होने पर मूल मिलावा व परमधाम सेहेरग से भी नजदीक हो जाता है, जिसे पाने के लिये फिर किसी भी प्रकार का यत्न नहीं करना पड़ता है। (जप–तप आदि साधनाओं के द्वारा जीव सृष्टि परमधाम नहीं जा सकते किंतु ब्रह्मात्माऐं तो वहीं विराजमान हैं, उन्हें वाणी के आधार पर परमधाम, राजश्यामाजी एवं निजस्वरूप का चिंतन व चितवन करना होता है।) क्योंकि ये संसार तो स्वप्नवत है, और हम वहीं मूल मिलावे में राजजी के चरणों में बैठे हैं।

अब अगले विवेचनात्मक चौपाई की ओर जाते हैं :–

15. जो लों पिऊ सुध ना हुती, तो सुहागिन अंग में पीऊ।
जब पिया जाहेर हुये, तब ले खड़ी अंग जीऊ।। क. हि. 11/17

यहां प्रारम्भिक स्थिति के अनुसार नजर से दिल अर्श होने का वर्णन किया जा रहा है, जिसमें राजजी अपनी नजर में रखे हुए कुछ जोश व जागृत बुद्धि आवश्यकतानुसार प्रदान करते रहते हैं। अज्ञान अवस्था में राजजी का जोश (आंशिक मात्रा में), सत्य के खोज की भावना व आत्म कल्याण की तड़प के रूप में ही दिखायी देता है–

''जो कदी भूली वतन, तो भी नजर तहां निदान''
''खोज सुहागिन ना थके, जो लों पार के पार के पार''।

प्रारम्भिक स्थिति में अज्ञानता, विकार, दुख आदि तो बने ही रहते हैं, उसे पूर्ण दिल अर्श कैसे माना जा सकता है। जब तारतम ज्ञान प्राप्त हो जाता है (वाणी से दिल अर्श हो जाता है) तो वह तारतम का बल लेकर धनी के राह में आगे बढ़ने लगती है, फिर चितवनी के द्वारा आत्मबल पल पल बढ़ता जाता है। राजजी के प्रेम व आनंद में आत्मा डूबते जाती है। इस चौपाई ''**तब ले खड़ी अंग जीऊ''** का यही भाव है।

यदि शुरू से ही इंद्रावती जी के धाम हृदय में राजजी पूर्ण शक्तियों सहित विराजमान थे तो क्यूं कहा जाता है कि महामति जी के धाम हृदय में हब्शे में या 1712 में राजजी विराजमान हुए थे।

दियो जोस खोले दरबार, देखाया सुन्य के पार के पार। प्र. हि. 37/73
आवेस अंग आपी आधार, देई तारतम उघाड़या बार। प्र. गु. 37/20
जब आह सूकी अंग में, स्वांस भी छोड़यो संग।
तब तुम परदा टाल के, दियो मोहे अपनो अंग।। क. हि. 8/8
मैं तो अपना दे रही, पर तुम ही राख्यो जीऊ।
बल दे आप खड़ी करी, कछु कारज अपने पिऊ।।क. हि. 8/9

देवचंद्र जी के विषय में भी कहा है :–

श्री सुंदरबाई श्यामा जी अवतार, पूरन आवेस दियो आधार।

अर्थात् श्याम जी के मंदिर में देवचंद्र जी को राजजी ने पूर्ण आवेश प्रदान किया। अर्थात् आवेश स्वरूप से उनके तन में विराजमान हो गये।

वि. सं. 1678 एवं 1712 के बीच में क्या देवचंद्र जी और मिहिरराजजी दोनों तनों में राजजी का पूर्ण आवेश विराजमान था।

सुंदरसाथ के लिये भी कहा गया है।

अंग दिये बिना आवेस, नही प्रेम उपाए।
आवेस दे करूं जागनी, लेऊं अंग में मिलाए।। क. हि. 23/37

हिस्सा देऊं आवेश का, सैंयन को सब पर।
''नूर जोश देऊं अंग में, जो कोई मोमिन मुस्लिम''

यदि सब सुंदरसाथ के अंदर पहले से ही राजजी/आवेश (जोश) आदि अन्य शक्तियां विराजमान होते हैं, तो उन्हें आवेश(जोश) देने की बात क्यूं आती है।

इस प्रकार उपरोक्त सम्पूर्ण लेख का सार यही निकलता है कि दिल अर्श कहलाने की बात, सेहेरग से नजदीक होने की बात एवं धारणा ध्यान करने की बात, ये तीनों अलग–अलग चीजें हैं। दिल अर्श के तीन भे हैं, वाणी में नजर से, वाणी से, स्वरूप से। नजर से दिल अर्श होना इस प्रकार है कि वे पल पल हमें अपनी नजर में रखे हुए हैं और आवश्यकता अनुसार जोश व जागृत बुद्धि देते रहते हैं। वाणी के द्वारा दिल अर्श होने का भाव है कि वाणी मंथन से हमारे दिल में परमधाम की पहचान व राजश्यामाजी के स्वरूप का ज्ञान आ जाता है, तथा राजजी के प्रति विरह–प्रेम–तड़प पैदा हो जाती है। स्वरूप से दिल अर्श होने का भाव ये है कि हमारे हृदय में राजजी का स्वरूप बस जाये। और सेहेरग से नजदीक होने का भाव मूल मिलावे में राजजी के चरणों में ही बैठे होने से है। ध्यान हेतु धारणा क्षर अक्षर से परे परमधाम का ही लेना होता है। दिल में प्रतिबिम्ब देखने की, शरीर के दिल अंग में ध्यान करने की एवं दुनिया के दिल में होने की बात पूर्णतः वाणी विपरीत और निरर्थक है।

मूल स्वरूप व मूल वाणी से जुड़े बिना कभी भी सत्य की प्राप्ति और आत्म जागृति नहीं हो सकती।इस प्रकार मैंने दिल अर्श से संबंधित हर पहलु पर वाणी मंथन करके आपके सामने अपने विचार व्यक्त किया है, अब आप सबका दिल जैसी गवाही दे, उसे मानने के लिये आप स्वतंत्र हैं। कुर्आन पाक में खुदा तआला महंमद साहब से फुरमाते हैं कि **''तुम्हारा काम मात्र स्पष्ट रूप से संदेश पहुंचा देना है, हिसाब लेना तो हमारे जिम्मे है।''** यहां प्रतिष्ठा का भी कोई प्रश्न नहीं है क्योंकि **''सारी शोभा उस खुदा के लिये है, जो आसमान जिमी का रब है।''** भूल चूक के लिये क्षमा मांगते हुए आप सबके चरणों में मैं प्रणाम करता हूँ। **प्रणाम जी**

समस्त सुंदरसाथ की चरणरज
महात्मा सुशांत निजानंदी